॥ श्रीराधासर्वेश्वरो विजयते ॥



॥ श्रीभगवन्निम्बार्काचार्याय नमः॥

श्रीगोपीश्वरशरणदेवाचार्यदशश्लोकी

एवं

शैव-वैष्णवों के शास्त्रार्थ में शैवों के द्वारा किये गये

६४ प्रश्नों का समाधान



जगद्गुरु निम्बार्काचार्य श्रीगोपीश्वरशरणदेवाचार्यजी महाराज

* श्रीसर्वेश्वरो जयति *



।। श्रीभगवन्निम्बार्काचार्याय नमः ।।

श्रीगोपीश्वरशरणदेवाचार्य-
दशश्लोकी

प्रणेताः--

अनन्त श्रीविभूषित जगद्गुरु श्रीनिम्बार्काचार्यपीठाधीश्वर

श्रीराधासर्वेश्वरशरणदेवाचार्य

श्री ''श्रीजी'' महाराज

प्रकाशक--

विद्वत्परिषद्

अ० भा० श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ, निम्बार्कतीर्थ

सलेमाबाद, पुष्करक्षेत्र, किशनगढ जि. अजमेर (राज०)

शुभ मिति माघ कृष्ण १० बुधवार

वि. सं. २०७२ दिनांक ३/२/२०१६

पुस्तक प्राप्ति स्थान--

अखिल भारतीय श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ

निम्बार्कतीर्थ (सलेमाबाद)

फोन नं0 - 01497 -227831

प्रथमावृत्ति--१०००

मुद्रक--

श्रीनिम्बार्क मुद्रणालय

निम्बार्कतीर्थ (सलेमाबाद)

न्यौछावर

बीस रुपये

।। श्रीसर्वेश्वरो जयति ।।

।। श्रीभगवन्निम्बार्काचार्याय नमः ।।

समर्पण

अनन्त श्रीविभूषित जगद्गुरु निम्बार्काचार्यपीठाधीश्वर

श्रीगोपीश्वरशरणदेवाचार्यजी महाराज

के युगलचरणारविन्दों में-

श्रीगोपीश्वरशरणदेवाचार्यदशश्लोकी

सादर सश्रद्ध भक्तिपूर्वक

समर्पित है।

समर्पकः-

आचार्यश्रीपदपङ्कजपरागाभिलाषीः-

श्रीराधासर्वेश्वरशरणदेवाचार्य

शुभ मिति माघ कृष्ण १० बुधवार

वि. सं. २०७२ दिनांक ३/२/२०१६

आचार्यश्री की अद्भुत सम्प्रदायनिष्ठा

श्रीनिम्बार्क सम्प्रदाय की आचार्य परम्परा के ४५ वें आचार्य अनन्त श्रीविभूषित जगद्गुरु निम्बार्काचार्यपीठाधीश्वर श्रीगोपीश्वरशरणदेवाचार्य श्री ''श्रीजी'' महाराज की सम्प्रदायनिष्ठा उपास्यनिष्ठा, आचारनिष्ठा एवं शास्त्रनिष्ठा अतीव अद्भुत एवं अनुकरणीय है। अनन्त श्रीविभूषित जगद्गुरु निम्बार्काचार्यपीठा-धीश्वर श्रीराधासर्वेश्वरशरणदेवाचार्य श्री ''श्रीजी'' महाराज ने ''श्रीगोपीश्वरशरणदेवाचार्य दशश्लोकी'' का प्रणयन करके महाराजश्री की निष्ठाओं के प्रति श्रद्धासुमन अर्पित किए हैं।

जगद्गुरु श्रीगोपीश्वरशरणदेवाचार्यजी महाराज से सम्प्रदाय परिवर्तन का महाराज श्रीरामसिंहजी से आग्रह करवाने वाले श्रीबख्शीराम व्यासजी इस रहस्य से अपरिचित रहे कि निम्बार्क सम्प्रदाय के आचार्य परात्पर ब्रह्म जो ज्योति स्वरूप है तथा जो श्रीराधाकृष्ण के युगल रूप में प्रकट हुआ है, के उपासक हैं। परम तत्त्व रूप अतिशय सौन्दर्य और गुणों के निधि श्रीराधाकृष्ण की युगलोपासना जो परम आनन्द स्वरूपा है, को कौन छोड़ना चाहेगा। निंकुञ्ज भाव के उपासक आचार्य परम रस का परित्याग करके मट्ठे को क्यों ग्रहण करेंगे। श्रीव्यासजी को यह भी ध्यान रखना चाहिए था कि श्रीश्यामसुन्दर के साथ कुञ्ज लीला में विद्यमान रहने वाली श्रीराधा ही पार्वती, सीता आदि स्वरूपों को ग्रहण करती हैं। श्रीशिव तो स्वयं ही परम वैष्णव हैं। मुझे प्रतीत

होता है कि आग्रह करने वाले उच्चकोटि के तान्त्रिक नहीं थे सम्भवतः षट् कर्म की साधना तक ही उनकी गति थी अन्यथा ''रुचीनां वैचित्र्यादृजुकुटिल नानापथजुषाम्। नृणामेको गम्यस्त्व-मसि पयसामर्णव इव'' की भावना को धारण करने वाले होते। ''एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्ति'' के उपासक भी अपनी उपासना पद्धति के अनुसार सम्प्रदायानुकूल चिह्नों को धारण करते हैं। वे न तो अन्यों को अपने सम्प्रदाय के अनुकूल वस्तुएँ धारण करने का दुराग्रह करते हैं और न दूसरों की निन्दा करते हैं।

श्रीगोपीश्वरशरणदेवाचार्यजी महाराज की यह दृढ धारणा थी कि श्रीसर्वेश्वर प्रभु की सम्पदा ही यह जगत् है इसी से हमारा जीवन निर्वाह होगा यह सम्पदा किसी राजा-महाराजा की नहीं है। उपनिषद् में कहा है-''तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम्'' अर्थात् परम प्रभु श्रीसर्वेश्वर से त्यागी गई जगत् की वस्तुओं से जीवन निर्वाह करो, ललचाई दृष्टि मत रखो, यह धन उसी प्रभु का है, दूसरे का नहीं। आचार्यश्री ने इसी भाव को जीते हुए जयपुर का परित्याग कर दिया और वैष्णवता को श्रेष्ठ सिद्ध कर दिया-''वैष्णव की टपरी भली नहीं शाकन को गाँव।''

आचार्यश्री ने ऊर्ध्वपुण्ड्र को ही धारण किए रखा। त्रिपुण्ड्र धारण नहीं किया। ऊर्ध्वपुण्ड्र आत्मा के गोलोक प्राप्ति की गति का सूचक है, गोलोक में अमृत की निधि है। श्यामा-श्याम की नवधा भक्ति का लाभ है और वैष्णव इसके अरितिक्त

कुछ भी नहीं चाहते, मोक्ष को भी निःसार समझते हैं। वेद में कामना है--

"ता वां वास्तून्युश्मसि गमध्यै यत्र गावो भूरिशृङ्गा अयासः।
अत्राह तदुरुगायस्य वृष्णः परमं पदमवभाति भूरि।।"

"विष्णोः पदे परमे मध्व उत्सः।।"

शास्त्र की रक्षा के लिए आचार्यश्री ने प्रश्नकर्ताओं को उत्तर देते हुए ऊर्ध्वपुण्ड्र, तुलसी, गोपीचन्दन, शंख-चक्र आदि के महत्व को प्रतिपादित किया तथा अपनी ज्ञान गरिमा को उच्चकोटि पर रखते हुए अन्यों की निन्दा नहीं की यह आचार्यश्री की कितनी बड़ी उदारता थी। आपश्री ने यह भी प्रतिष्ठित कर दिया कि इस सम्प्रदाय के आचार्य एवं भक्तगण सम्प्रदाय को उदरपूर्ति के लिए अपनाएं हुए नहीं है अपितु श्रीसर्वेश्वर प्रभु के लिए सर्वस्व समर्पण है। आचार्यश्री का कितना कठोर व्रत था कि वृन्दावन प्रवास के समय जयपुर राज्य की सीमा में अन्न-जल भी ग्रहण नहीं करते थे। इस प्रकार के आचार्यों से ही पृथिवी के मानव अपने-अपने चरित्र की शिक्षा ग्रहण करें-यही मनु का आदेश है--

"एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनाः।
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवाः।।"

अनन्त श्रीविभूषित जगद्गुरु श्री "श्रीजी" महाराज ने आचार्यश्री की वन्दना में दशश्लोकी का प्रणयन करके अपनी कृतज्ञता, सम्प्रदायनिष्ठा एवं आचार्य परम्परा के प्रति अपने

उदार हृदय का परिचय दिया है। इस दशश्लोकी के माध्यम से श्री ''श्रीजी'' महाराज भक्तों को उपदेश भी कर रहे हैं कि ''स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः।'' तथा ''धर्मो रक्षति रक्षितः'' आचार्यश्री की पावन वाणी हम सभी में युगलोपासना की भक्ति को दृढता प्रदान करें, इसी कामना के साथ।

श्री श्रीजी महाराज के अनुग्रह का आकांक्षी-

डा. दूलीचन्द शर्मा
जयपुरमण्डलान्तर्गत-मुरलीपुरा (जोबनेर) ग्राम वास्तव्यः
प्राचार्य-श्रीसर्वेश्वर संस्कृत महाविद्यालय
निम्बार्कतीर्थ-सलेमाबाद जि. अजमेर (राज.)

स्वकीय - भावना

श्रीनिम्बार्क सम्प्रदाय की आचार्य परम्परा श्रीहंस भगवान्-महर्षिवर्य श्रीसनकादि-देवर्षिवर श्रीनारदजी एवं सुदर्शन-चक्रावतार श्रीभगवन्निम्बार्काचार्य से प्रारम्भ होती है और आपश्री आचार्य परम्परा में ४५ पैंतालिसवें आचार्यश्री-अनन्त श्रीविभूषित जगद्गुरु निम्बार्काचार्यपीठाधीश्वर श्रीगोपीश्वरशरणदेवाचार्य श्री "श्रीजी" महाराज ने श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ को सुशोभित किया। आपने अपने कार्यकाल में स्वसम्प्रदाय का विपुल प्रचार-प्रसार किया। आपश्री-श्रीसनकादि सेवित दक्षिणचक्राङ्कित गुञ्जाफलसम शालग्राम स्वरूप श्रीसर्वेश्वर प्रभु की सेवा सहित भारतवर्ष के विभिन्न अञ्चलों में परिभ्रमण कर श्रीनिम्बार्क सम्प्रदाय एवं अनादि वैदिक सनातन वैष्णवता का अतीव सम्बर्द्धन किया। आपश्री के अनुपम स्वरूप का परिवर्णन करना अति कठिन कार्य है।

आपश्री ने विक्रम संवत् १९०० से १९२८ पर्यन्त आचार्यपीठ को सुशोभित किया। जब आपश्री जयपुर के महाराज सवाई रामसिंहजी के समय जयपुर ही विराज रहे थे उस समय तान्त्रिक शाक्त श्रीबख्शीराम व्यास विशिष्ट समारोह में विद्वान् विप्रजनों जो वैष्णव परम्परानुगामी थे उनके मध्य भोजन के समय उनकी पंक्ति में आकर बैठ गये। सबने एक स्वर से कहा कि आप अपने शाक्तों की पंक्ति में जाकर भोजन करें। इस

कथन के कारण उसने अपने को अपमानित माना और भोजनोपरान्त महाराज श्रीसवाई रामसिंहजी के समीप जाकर कहा कि यद्यपि आप निम्बार्काचार्यपीठाधीश्वर जगद्गुरु श्रीगोपी-श्वरशरणदेवाचार्य श्री ''श्रीजी'' महाराज के कृपापात्र शिष्य है। तथापि उनसे कहें कि वे त्रिपुण्ड्र एवं रुद्राक्ष की माला धारण करलें।

इस कथन के अनुसार श्रीरामसिंहजी ने वहाँ उपस्थित सभी किन्तु मुख्यतः श्रीरामानन्द सम्प्रदाय के विशिष्ट विद्वान् सन्त-महात्माओं एवं श्रीगोपीश्वरशरणदेवाचार्य श्री ''श्रीजी'' महाराज तथा वल्लभसम्प्रदाय के तत्कालिक कामवन के महाराज को भी सन्देश देकर आहूत किया। सभी आचार्यप्रवरों के आगमन पर उनसे अपनी भावना प्रकट की कि त्रिपुण्ड्र एवं रुद्राक्ष माला धारण करलें, इसमें क्या आपत्ति है। इस पर सभी आचार्यप्रवरों, सन्त-विद्वानों ने कहा कि आप प्रथम श्रीगोपीश्वर-शरणदेवाचार्य श्री ''श्रीजी'' महाराज से कहें कि इस कथन को स्वीकार करें, क्योंकि आप उन्हीं के शिष्य हैं, यदि वे आपके कथनानुसार इसको मानलें तो हम भी इसे स्वीकार करते हैं।

इस पर शाक्त शैवों की ओर से संस्कृत में ६४ प्रश्न किये। जिसका उत्तर अपने आचार्यश्री के कृपापात्र शिष्य श्रीनारायणशरणजी ने समस्त प्रश्नों का संस्कृत में समाधान करके उनको परास्त किया। इतने पर भी जब महाराज सवाई रामसिंहजी ने अपने दुराग्रह को नहीं छोड़ा। तब आचार्यश्री ने

जयपुर परित्याग करके श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ निम्बार्कतीर्थ (सलेमाबाद) पधार आये। और यह प्रतिज्ञा की कि हम स्वयं किंवा भविष्य में भी आचार्यपीठासीन होने वाले आचार्यप्रवर भी जयपुर नहीं आवेंगे।

वि. सं. २००७ में अनेक भगवद्भक्तों सन्त-महात्माओं के विशेष भावानुसार यह निश्चय हुआ कि अब प्रजातन्त्र राज्य है, ऐसी स्थिति में जयपुर पादार्पण होना चाहिए। इस पर हमने स्वयं यह कहा जब श्रीगोपीश्वरशरणदेवाचार्य श्री "श्रीजी" महाराज ने जयपुर परित्याग कर दिया तो ऐसी अवस्था में हम कैसे जा सकते हैं।

अ. श्रीव्रजवल्लभशरणजी वेदान्ताचार्य पञ्चतीर्थ ने कहा कि यदि श्रीसर्वेश्वर प्रभु आज्ञा प्रदान कर दें तब स्वीकार करना ही होगा। हमने कहा, क्या श्रीसर्वेश्वर प्रभु प्रत्यक्ष प्रकट होकर आज्ञा प्रदान करेंगे? इस पर अधिकारीजी ने कहा कि यह सन्मुख दो कागज पुडियाँ है, इनको उठावें। स्वयं श्रीप्रभु आदेश प्रदान करेंगे।

पुडियाँ तीन बार उठाई गई तब यही लिखा हुआ प्राप्त हुआ कि जयपुर जाना चाहिए। इसी आज्ञानुसार वि. सं. २००७ आषाढ (द्वितीय) में जयपुर का कार्यक्रम निर्धारित हुआ।

जयपुर निवासी श्रीरङ्गिलीशरणजी (श्रीछगनलालजी-मोहनलालजी बजाज) एवं श्रीवृन्दावन वास्तव्य योगमाया बाबा श्रीमाधुरीदासजी का नाम विशेष उल्लेखनीय है। और आचार्यपीठ

के तीनों अधिकारीवृन्दों का भी परिश्रम परम सराहनीय है।

इस प्रकार जयपुर में लगभग २५ दिवस पर्यन्त दांता हाऊस में श्रीसर्वेश्वर प्रभु का निवास रहा। इस अवसर पर श्रीवृन्दावनस्थ एवं जयपुर के अनेक सन्त-महन्त, विद्वज्जन सम्मिलित हुए जिसका पूरा वर्णन "श्रीस्तवरत्नाञ्जलि" के पृष्ठ १७, १८ में अवलोकनीय है।

शुभ मिति - माघ कृष्ण १० बुधवार
वि. सं. २०७२ दिनांक ३/२/२०१६

--श्रीराधासर्वेश्वरशरणदेवाचार्य

श्रीगोपीश्वरशरणदेवाचार्यदशश्लोकी

(१)

श्रीमद्गोपीश्वराचार्यं शरणान्तं जगद्गुरुम्।
निम्बार्काचार्यपीठेशं सश्रद्धं प्रणमाम्यहम्।।

अनन्त श्रीविभूषित निम्बार्काचार्यपीठाधीश्वर जगद्गुरु श्रीगोपीश्वरशरणदेवाचार्यजी महाराज को श्रद्धा पूर्वक प्रणाम करते हैं।।१।।

(२)

श्रीघनश्यामदेवस्य पीठाचार्यस्य सद्गुरुम्।
गोपीश्वराख्यमाचार्यं नमामि नित्यशो हृदा।।

अनन्त श्रीविभूषित निम्बार्काचार्यपीठाधीश्वर श्रीघन-श्यामशरणदेवाचार्यजी महाराज के गुरुवर्य श्रीगोपीश्वर-शरणदेवाचार्यजी महाराज को प्रतिदिन अपने अन्तःकरण से प्रणाम करते हैं।।२।।

(३)

गोपीचन्दनसंलिप्तमूर्ध्वपुण्ड्रसुशोभितम्।
तुलसीकण्ठिकां कण्ठे धारयन्तं सदाऽऽश्रये।।

जिनके गोपीचन्दन से अपने कमनीय ललाट पर ऊर्ध्व पुण्ड्र तिलक सुशोभित है। और स्वकीय कण्ठप्रदेश में तुलसी की कण्ठी शोभायमान है। ऐसे परमाचार्य जगद्गुरु श्रीगोपीश्वरशरण-देवाचार्यजी महाराज का सदा सर्वदा आश्रय लेते हैं।।३।।

(४)

श्रीसर्वेश्वरसेवायां स्थितं परमदेशिकम्।
श्रीगोपीश्वरदेवञ्च नौमि प्रपन्नपोषकम्।।

महर्षिवर्य श्रीसनकादिकों द्वारा परिसेवित गुञ्जाफल सदृश शालग्राम स्वरूप श्रीसर्वेश्वर प्रभु की सेवा में सदा अवस्थित श्रीगोपीश्वरशरणदेवाचार्यजी महाराज जो शरणागतों का परिपालन करने वाले हैं उनको हम अभिनमन करते हैं।।४।।

(५)

जयपुरस्य सम्पत्तिं विहाय सर्वमागतम्।
इदृशं परमाचार्यं प्रणमामि मुहुर्मुहुः।।

जयपुर नरेश सवाई श्रीरामसिंहजी एक शाक्त तान्त्रिक बख्शीराम व्यास के कथन पर आचार्यश्री के शिष्य होते हुए भी यह कहा के आप त्रिपुण्ड्र एवं रुद्राक्ष माला धारण करें। इस प्रसङ्ग को लेकर शास्त्रों के विभिन्न प्रमाणों से प्रतिपादित किया आपका दुराग्रह उचित नहीं है। उस अवसर पर शाक्त शैवों ने ६४ चौसठ प्रश्न किए जिसका सम्यक् समाधान शास्त्रीय प्रमाणों से उनका खण्डन किया। इतने पर भी रामसिंहजी का दुराग्रह बना रहा तब श्रीगोपीश्वरशरणदेवाचार्यजी महाराज मन्दिरादि सम्पूर्ण सम्पत्ति का परित्याग कर यहाँ अखिल भारतीय जगद्गुरु श्रीनिम्बार्काचार्य-पीठ निम्बार्कतीर्थ-सलेमाबाद पादार्पण किया। ऐसे परमाचार्य को पुनः-पुनः प्रणाम करते हैं।

(६)

आचार्यपीठमागत्य प्रभुसेवासमाश्रितम्।
श्रीगोपीश्वरदेवं वै जगद्गुरुवरं भजे।।

श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ में जयपुर से पधार कर श्रीसर्वेश्वर-श्रीराधा-माधव भगवान् की नित्य सेवा में संलग्न हुए ऐसे आचार्यप्रवर जगद्गुरु श्रीगोपीश्वरशरणदेवाचार्यजी महाराज का हम भजन करते हैं।।६।।

(७)

जयपुरमहाराजं विरुद्धकार्यतत्परम्।
वैष्णवविपरीतञ्च विलोक्य स समाययौ।।

जयपुर के महाराज सवाई रामसिंहजी के वैष्णवता के विपरीत कार्य को देखकर के श्रीगोपीश्वरशरणदेवाचार्यजी महाराज जो आचार्यपीठ पधारे उनका हम भजन करते हैं।।७।।

(८)

गोपीश्वरस्वकाचार्यं पीठेशं प्रणमाम्यहम्।
शास्त्रार्थकरणे श्रेष्ठं सुधीवरैः प्रपूजितम्।।

उच्चकोटि के उद्भट्ट विद्वानों के द्वारा परिपूजित एवं शास्त्रार्थ करने में अति निपुण निम्बार्काचार्यपीठाधीश्वर श्रीगोपीश्वरशरणदेवाचार्यजी महाराज को प्रणाम करते हैं।।८।।

(९)

श्रुति-स्मृति-पुराणादि-मर्मज्ञं शास्त्रचिन्तकम्।
एवञ्च परमाचार्यं नमामि नितरां मुदा।।

श्रुति-स्मृति-सूत्र-तन्त्र-पुराणादि शास्त्रों के परम मर्मज्ञ शास्त्र चिन्तक श्रीगोपीश्वरशरणदेवाचार्यजी महाराज को बड़े उल्लास के साथ सर्वप्रकार से अभिनमन करते हैं।।९।।

(१०)

राधामाधवसेवायां तत्परं प्रत्यहं प्रियम्।
श्रीगोपीश्वरदेवञ्च नमामि मनसा सदा।।

श्रीराधामाधव भगवान् की नित्य सेवा में सर्वदा तत्पर ऐसे श्रीगोपीश्वरशरणदेवाचार्यजी महाराज को मनसा-वाचा-कर्मणा सदा सर्वदा नमन करते हैं।।१०।।

(११)

गोपीश्वरदशश्लोकी हरिभक्तिप्रदायिका।
राधासर्वेश्वराद्येन शरणान्तेन निर्मिता।।

सर्वेश्वर श्रीराधामाधव भगवान् की भक्ति प्रदान करने वाली श्रीगोपीश्वरशरणदेवाचार्य दशश्लोकी जिसकी रचना उन्हीं के कृपाप्रसाद से यहाँ प्रस्तुत है।।११।।

आज बधाई सब मिलि गावो।
श्रीगोपीश्वरशरणदेवाचार्य शिरोमणि अति हरषावो।।
भावुकजन भी जय जय उचरत,
अनुपम सुरभित कुसुम बरषावो।
माघ कृष्ण की दशमी सोहत, श्रीपाटोत्सव मंगल भावो।।
श्रीनिम्बारकतीर्थ पुरी पर, चहुँदिशि शोभा हरषित आवो।
शरण सदा राधासर्वेश्वर, शरणागत को नित अपनावो।।

निम्बारक अवनि सुभग बधाई।
श्रीगोपीश्वरशरणदेव की, शोभा दरशन मुदित मन भाई।।
भावुक जनता पुनि पुनि आकर, मधुर बजावत शुभ सहनाई।
कुसुमित माला निज कर लाकर, हरषित होकर द्रुत पहनाई।।
श्रीसर्वेश्वर सेवा प्रतिदिन, जाकर मन्दिर कर हरषाई।
शरण सदा राधासर्वेश्वर, हम शरणागत तभी भलाई।।

जिनके ठाकुर श्रीसर्वेश्वर।
राधामाधव शोभित सुन्दर, श्रीसर्वेश्वर परम मनोहर।।
श्रीगोपीश्वरशरणदेव भी, सेवा पाकर मुदित निजान्तर।
शरण सदा राधासर्वेश्वर, ध्यान धरो श्रीआचारजवर।।

जगद्गुरु वर श्रीगोपीश्वर।
तीर्थ शिरोमणि श्रीनिम्बारक, राजत अतिशय गावत बुधवर।।
विविध वाद्य भी ले-ले आकर, सुभग बजावत मंगल बर बर।
शरण सदा राधासर्वेश्वर, आज भलो दिन पीठ मही पर।।

श्रीगोपीश्वर बजत बधाई।
प्रभातकालहि मंगल ढोलक, परम मनोहर तुरी बजाई।।
लेकर गुणिजन पीत कुसुम की, शुभ अङ्गों पर माल धराई।
शरण सदा राधासर्वेश्वर, जय-जय बोलो अति सुखदाई।।

भज भज गोपीश्वर सुखदाई।
नाम उचारत निज मानस में, जिनकी महिमा गाइ न जाई।।
हरित लतावलि मध्य विराजत, शोभा जिनकी अनुपम भाई।
शरण सदा राधासर्वेश्वर, जगद्गुरु पद कृपा भलाई।।

आज भलो दिन पीठ महीपर।
भावुक जन जन जय जय बोलत,
धावत आवत अतिशय सुन्दर।।
पुलकित होकर पुनि पुनि नाचत,
निज निज अपने हाथ उठाकर।
शरण सदा राधासर्वेश्वर, पद प्रपन्न हो श्रीगोपीश्वर।।

पावन महिमा श्रीगोपीश्वर।
झटपट चालो माला लेकर, हृदय ध्यान कर अगणित बुधवर।।
प्रतिदिन शुक-पिक नादित अतिप्रिय,
चातक पिहु पिहु करत मनोहर।
शरण सदा राधासर्वेश्वर, मोर घोर रव परम सुभगतर।।

(१)

श्रीमद् गोपीश्वरशरण,-देवाचार्य महान।
श्रीजगद्गुरुवरेण्य हैं, ''शरण'' शास्त्र का ज्ञान।।

(२)

अतुलित महिमा आपकी, श्रीप्रभु सेवा ध्यान।
श्रीनिम्बार्कपीठ के, ''शरण'' स्वाचार्य गान।।

(३)

सर्वेश्वर सेवा निरत, सनकादिक परिसेव्य।
तुलसीदल अरपन करत, ''शरण'' मन्त्र परिगेव्य।।

(४)

सवाई रामसिंहजी, जयपुर नगर नरेश।
निज गुरु गोपीश्वरशरण, ''शरण'' प्रपन्न विशेष।।

(५)

इतने पर भी रामसिंह, सुशाक्त बक्षीराम।
इसके चक्कर में पड़े, ''शरण'' भणत अविराम।।

(६)

श्रीमद्गोपीश्वरशरण, निजगुरु करत प्रणाम।
निवेदन पूर्वक वन्दना, ''शरण'' करत तज मान।।

(७)

त्रिपुण्ड्र भस्म धारण हो, यही निवदेन रूप।
इसमें कोन कारण है, ''शरण'' कहत श्रीभूप।।

(८)

इस पर आचार्यवर ने, प्रकट किया उपदेश।
वैष्णवता यह कार्य भी, ‘‘शरण’’ शास्त्र सन्देश।।

(६)

नरेन्द्र ने जब हठ किया, जयपुर तजा निहाल।
सर्वेश्वर सेवा सहित, ‘‘शरण’’ पधारे हाल।।

(१०)

श्रीनिम्बार्कपीठ पर, हुआ महोत्सव आज।
श्रीचरणों का आगमन, ‘‘शरण’’ प्रसन्न समाज।।

(११)

रामसिंह भी दुखी भये, मन में हुआ विषाद।
हाथी भेजा पीठ भुवि, ‘‘शरण’’ निधन पथि नाद।।

(१२)

आचार्यवर की विद्वत्ता, सर्वत्र प्रचुर प्रचार।
अनुपम सरल स्वभाव है, ‘‘शरण’’ सदा अवधार।।

(१३)

रजत सिंहासनासीन, दरश सुमंगल दिव्य।
गोपीश्वरशरण पदाब्ज, ‘‘शरण’’ प्रणाम प्रदिव्य।।

(१४)

दर्शनार्थी आवत हैं माला लेकर नित्य।
आचार्यवर अभिराजत, ‘‘शरण’’ दिव्य आदित्य।।

(१५)

वृन्दावन यमुना पुलिन, शोभित विहार घाट।
सन्त मध्य अभिशोभित हैं, ''शरण'' वहीं पर ठाट।।

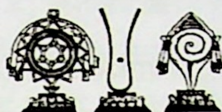
(१६)

गोपीश्वरशरणदेवा-,चार्य पदाब्ज प्रणाम।
निम्बार्कपीठेश्वर हैं, ''शरण'' भणत शुभ नाम।।

(१६)

एवंविध आचार्यवर, शोभित परमाधार।
राधासर्वेश्वरशरण, कथन सुधा संचार।।

✻ श्रीराधासर्वेश्वरो विजयते ✻



।। श्रीभगवन्निम्बार्काचार्याय नमः ।।

जयपुर में जयपुर नरेश महाराज रामसिंहजी के कार्यकाल में शैव - वैष्णवों के शास्त्रार्थ में शैवों के द्वारा

किये गये ६४ प्रश्नों के समाधान का

संस्कृत-भाषानुवाद में विवरण

संस्कृत भाषानुवादकः-
पं० श्रीवैष्णवदासजी शास्त्री

माघ शुक्ला ५ बसन्त पञ्चमी मंगलवार
दिनांक :- ३ / २ / १९८७

भूमिका

जयपुर श्रीमन्महाराजाधिराज श्रीरामसिंहजी महाराज के राज्यशासन काल में एक श्रीबक्षीराम व्यास नामक ने महाराज के समीप प्रवेश किया, महाराज को अपने व्यवहार से प्रसन्न कर कहा कि आप अपने गढ़ के भीतर शिव के मन्दिर बनवाकर उनको पधरावें, वह आपको पुत्र देंगे जो कुछ होगा सो शिव से ही होगा। महाराज ने भी वैसा ही किया, बाद में उसने कहा कि आपके यहाँ जो वैष्णव लोग रहते हैं, वे लोग भी भस्म धारण करें और रुद्राक्ष गले में धारण करें। महाराज ने भी वैसा वैष्णव लोगों को आदेश दिया, उस समय में जयपुर में श्रीनिम्बार्काचार्य श्रीगोपेश्वरशरण-देवाचार्यजी वर्तमान थे, उनकी जीविका ७५ हजार साल की थी और जयपुर के राज्य में २२ स्थानों के ऊपर अधिकार था, जो चाहें सो करें और श्रीसम्प्रदाय के, माधव सम्प्रदाय के स्थान थे और श्रीवल्लभकुल के स्थान थे, उसमें कामवन वाले श्रीदेवकी-नन्दनजी के पिताजी थे। महाराज के आदेश को श्रवण कर और वैष्णव लोगों ने कहा कि जो श्रीजी महाराज करेंगे वह हम लोग को अंगीकार है। बाद में महाराज श्रीरामसिंहजी ने श्रीनिम्बार्काचार्य श्रीगोपेश्वरशरणदेवाचार्यजी से कहा कि आप भस्म, रुदाक्ष धारण करें, श्रीजी महाराज ने उतर दिया कि जो भस्म, रुद्राक्ष के अधिकारी है, उनके लिये भस्म-रुद्राक्ष हैं, हम लोगों के लिये गोपीचन्दन से ऊर्ध्वपुण्ड्र और तुलसी विष्णु सम्बन्धी कर्तव्य विधान है। इत्यादि कहकर श्रीजी महाराज राजा महाराज के

आदेश का निरादर कर दियें, फिर श्रीरामसिंहजी ने श्रीजी से कहा कि मुझको राज हठ पड़ा है, इसलिये आप एकान्त में हाथ में भस्म का गोला ले लेवें, श्रीजी महाराज ने उतर दिया कि हाथ में भस्म गोला लेने में पाप नहीं हैं, हाथ से क्या नहीं स्पर्श होता है। आप राजहठ से कहते हैं तो मेरे को योग हठ है, मैं भस्म गोला कि तरफ देख ही नहीं सकता हूँ और एकान्त में आपसे वार्ता भी नहीं, इस समय मैं करूँगा, बाद में महाराज साहेब ने कहा कि आप लोगों के मत, वेद, शास्त्र विरुद्ध है, आप लोग अपने मत को वेदशास्त्र से सिद्ध करें, श्रीजी महाराज ने राजा साहब के वचन अंगीकार कर शास्त्रार्थ आरम्भ किया, आरम्भ में श्रीदेवकीनन्दनजी के पिताजी उत्तर न देकर बीकानेर चल दिये। श्रीजी की तरफ से श्रीजी के शिष्य काशी के श्रीबालशास्त्रीजी के पास षट् शास्त्र अध्ययन करने वाले श्रीनारायणदासजी प्रश्नों के उत्तर देने लगे। और श्रीसम्प्रदाय वाले अलग उत्तर देने लगे। राजा साहेब अपने दल में काशी आदि से विद्वानों को बहुत इकट्ठे किये। इस प्रकार लेख द्वारा प्रश्न और उत्तर ६ मास तक हुआ। बाद में सभा नियत की गई, उस सभा में देश-देशान्तर से वैष्णव विद्वान् और महाराज साहेब के पक्ष के विद्वान् उपस्थित थे, कितने दिन तक घौर शास्त्रार्थ हुआ, महाराज साहेब की उस सभा में हार हो गई बाद में श्रीगोपेश्वरशरण-देवाचार्यजी ने विचारा कि अब हम जयपुर को त्याग देंवे, जहाँ धर्म का विरोध उठा, वहाँ रहना उचित नहीं हैं, तब श्रीजी महाराज ने राजा साहेब से कहा कि सलेमाबाद में कुण्ड खुदता है, उसको देखने के लिये मैं जाता हूँ। राजा साहब ने कहा कि देख आइये।

वहाँ से श्रीजी महाराज सलेमाबाद चले आये। किशनगढ के राज्य में सलेमाबाद है।

संवत् १९२१ कार्तिक शुक्ल १५ के रोज श्रीगोपेश्वरशरणदेवाचार्यजी महाराज ने जयपुर त्याग दिया, फिर जयपुर महाराज ने बहुत प्रार्थना की, किन्तु आचार्यश्री ने जीवन पर्यन्त तक जयपुर की जमीन पर पैर नहीं रखा। जयपुर में प्रश्न-उत्तर जो हुये सो संस्कृत में थे सब लोगों की समझ में नहीं आता था, इससे निम्बार्कीय श्रीजयनारायणजी जासरावत की प्रार्थना से पं० श्रीवैष्णवदासजी शास्त्री ने उसके अक्षरार्थ अनुवाद किया है।

सलेमाबाद में संवत् १९८३ आश्विन कृष्ण १।।

श्रीविक्रम संवत् १६२१ में जयपुर महाराज की ओर से वैष्णव सम्प्रदाय के ऊपरविरुद्ध प्रश्नों के उत्तरों का हिन्दी में अनुवाद

प्रश्न १-आपके सम्प्रदाय है, सो सम्प्रदाय शब्द के क्या अर्थ है?

उत्तर-अनादि परम्परा से प्रवृत्त उत्तरोत्तर अनुवर्तमान स्वभाव, सदाचार, सदुपदेशादि शब्दों के अर्थ सम्प्रदाय है। अमरकोष (आम्नायः सम्प्रदायः) गुरुपरम्परोपदेश से प्रदाय है। यह रामाश्रमी टीका है। सम्प्रदाय के उत्तरानुर्वतन द्विधा है, वृद्ध व्यवहार द्वारा, सम्प्रदायोपदेश द्वारा वृद्ध व्यवहार द्वारा में प्रमाण :--

यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः।
स यत्प्रमाणं कुरुते, लोकस्तदनुवर्तते।। (गीता)

वृद्ध जो आचरण करते हैं, वैसा ही पुत्र शिष्यादि करते हैं। वृद्ध के ही आचरण का प्रमाण देकर जन लोग उत्तरोत्तर आचरण करते हैं। यह बात स्वयं भगवान् ने अर्जुन को शिक्षा दी है और श्रीरामजी ने कहा है कि--

नाहं धर्ममपूर्वं ते, प्रतिकूलं प्रवर्तये।
पूर्वैर्यदभिप्रेतो, गतो मार्गोऽनुगम्यते।।

मैं आपके लिये शास्त्र विरुद्ध धर्म उपदेश नहीं करता हूँ। जो बड़े-बड़े लोग परम्परा से करते आते हैं, वही धर्म है। परम्परा से आगत सम्प्रदाय लोक में चलता है। यहाँ तक गुरु परम्परा से सम्प्रदाय कहा गया। सदाचार सदुपदेश के विषय में गीता में स्वयं भगवान् कहते हैं कि--

इमं विवस्वते योगं प्रोक्तवानहमव्ययम् ।
विवस्वान् मनवे प्राह मनुरिक्ष्वाकवेऽब्रवीत् ।। (गीता)

एवं परम्परा प्राप्तमिमं राजर्षयो विदुः" हे अर्जुन! मैंने जो धर्म आपके लिए उपदेश किया है वह अनादि है। सम्प्रदाय सिद्ध को परम्परा कहते हैं। मन्वंतर के आदि में जगत् यात्रा निर्वाह के लिए सूर्य के प्रति मैंने कहा था, सूर्य ने अपने पुत्र मनु को कहा, मनु ने अपने ज्येष्ठ पुत्र इक्ष्वाकु को कहा। इस प्रकार गुरु परम्परा सिद्ध इस धर्म का निमिष सगरादिक उत्तरोत्तर उपदेश ग्रहण करते आये हैं। और वेद में "ब्रह्मा देवानां प्रथमं सम्बभूव विश्वस्य कर्त्ता भुवनस्य गोप्ता। स ब्रह्मविद्यां सर्वविद्याप्रतिष्ठामथर्वाय ज्येष्ठपुत्राय प्राह। अथर्वणे यां प्रवदेत ब्रह्माथर्वा तां पुरोवाचाङ्गिरे ब्रह्मविद्याम्। स भारद्वाजाय सत्यवहाय प्राह भारद्वाजोऽङ्गिरसे परावराम्। मुण्डक. १-१-१२। सम्पूर्ण देवताओं में पहले ब्रह्मा उत्पन्न हुआ। वह विश्व का रचयिता और त्रिभुवन का रक्षक था। उसके अपने ज्येष्ठ पुत्र अथर्वा को समस्त विद्याओं की आश्रयभूत ब्रह्मविद्या का उपदेश दिया। अथर्वा को ब्रह्मा ने जिसका उपदेश किया था वह ब्रह्मविद्या पूर्वकाल में अथर्वा ने अङ्गी को सिखायी। अङ्गी ने उसे भारद्वाज के पुत्र सत्यवह से कहा तथा उसने इस प्रकार श्रेष्ठ से कनिष्ठ को प्राप्त होती हुई वह विद्या अङ्गिरा से कही। इत्यादि सदाचारोपदेश है। सो सम्प्रदाय इस काल में तत्तत् भेद से अनेक प्रकार का है। देशाचार भेद से मनुजी ने कहा है कि --

सरस्वती दृषद्वत्योर्देवनद्योर्यदन्तरम् ।
तं देवनिर्मितं देशं ब्रह्मावर्तं प्रचक्षते ।।

तस्मिन्देशे यः आचारः पारम्पर्य्यक्रमागतः।

वर्णानां सान्तरालानां स सदाचार उच्यते।।

सरस्वती और दृषदवती इन देवनदियों के मध्य जो निर्माण किया गया देश सो ब्रह्मावर्त कहाता है। उस देश में जो आचार है, वह सम्प्रदाय प्राप्त है। ब्राह्मणादि वर्णो का आचार सदाचार कहाता है। कुलाचार्य याज्ञवल्क्यजी ने कहा है--

अहन्येकादशे नाम चतुर्थे मासि निष्क्रमः।

षष्ठेऽन्नप्राशनं मासि चूड़ा कार्या यथा कुलं।।

गर्भाष्टमे षष्ठे वाब्दे ब्राह्मणस्योपनायनम्।

राज्ञामेकादशे सैके विशामेके, यथाकुलम्।।

जन्म के ११ वें दिन में नामकरण, ४ थे मास में निष्क्रमण, ६ठे मास में अन्नप्राशन तथा कुल के व्यवहारानुसार चूड़ाकर्म करना चाहिए। गर्भ के ८ वें वर्ष में या ६ठे वर्ष में ब्राह्मण का उपनयन, ११ वें वर्ष में क्षत्रिय का, १२ वें वर्ष में वैश्य का कुलाचार के अनुसार उपनयन करना चाहिए और कुलाचार गीताकार ने कहा है--

उत्साद्यन्ते जाति धर्माः, कुलधर्माश्च शाश्वताः।

युद्ध करने से जाति धर्म, कुल धर्म, वेद-वेदान्त सिद्ध अनादि धर्म नष्ट कहे हैं और मनु ने कहा हैं कि--

वेदोऽखिलो धर्ममूलं, स्मृतिशीले च तद्विदाम्।

आचारश्चैव साधूनां, आत्मनस्तुष्टिरेव च।।

समस्त वेद धर्म का मूल है, वेदज्ञों की स्मृति और शील, साधुओं का आचार और अपनी आत्मा की सन्तुष्टि धर्म है।

याज्ञवल्क्यजी ने कहा है कि--

कथायां सत्सदाचारे, सद्वृत्ते सत्समागमे।

धर्मादि संग्रहे नित्यं, तस्मात्कुर्यात्प्रयत्नतः ।।

कथा में, सदाचार में, सत् व्यवहार में, सत्संग में, धर्मादि के संग्रह में, कर्तव्य निरन्तर वेद से करना चाहिये। इस प्रकार श्रुति-स्मृति वचनों में श्रुति-स्मृति प्रमाणों से सदाचार पर्याय सम्प्रदाय प्रमाण सिद्ध है। ये ही सम्प्रदाय शब्द के अर्थ हैं। (१)

प्रश्न २ -- सम्प्रदाय के कितने भेद हैं ?

उत्तर--वैष्णव, श्रौत, सांख्य, पाशुपतयोग आदि भेद से सम्प्रदाय अनेक हैं। इसमें भागवत प्रमाण--

त्वां योगिनो यजन्त्यद्धा, महापुरुषमीश्वरम्।

साध्यात्मसाधिभूतं च साधिदैवं च साधवः ।।१।।

तृष्णया विद्यया केचित्त्वां वै चैतानि द्विजाः।

यजन्ति वित्तैर्यज्ञैर्नानारुपैराख्यया ।।२।।

योगी, साधुजन श्रद्धा से अध्यात्म, अधिभूत, अधिदैव के सहित महापुरुष ऐश्वर्यवान् आपको जपते हैं। कोई ब्राह्मण या क्षत्रिय, वैश्य, धन और विद्या के लोभ से नाना प्रकार विस्तृत यज्ञों से आराधन करते हैं।

एके त्वखिल कर्माणि सन्यस्योपशमं गताः।

ज्ञानिनो ज्ञानयज्ञेन यजन्ति, ज्ञानविग्रहम् ।।३।।

कर्मयोगी सब कर्मों को आप में समर्पण कर शान्ति को प्राप्त होते हैं। ज्ञानी लोग ज्ञानयज्ञ से ज्ञानस्वरूप आपका आराधन

करते हैं।

अन्ये च संस्कृतात्मानो विधिनाभिहिते मते।
यजन्ति त्वन्मयास्तां वै बहुमूर्त्येकमूर्तिकम्।।

शुद्धान्तःकरण वाले अन्यजन विधि के सहित आपमें तन्मय होकर अनेक स्वरूप और एक स्वरूप आपकी आराधना करते हैं।

त्वामेवान्ये शिवोक्तेन मार्गेण शिवरूपिणम्।
बह्वाचार्यविभेदेन भगवन्समुपासते,
सर्व एवम् यजन्ति त्वां सर्वदेवमयेश्वरम्।।

अन्य कोई शिवोक्त मार्ग से शिव रुप आपकी आराधना करते हैं। अनेक आचार्य के भेद होने से हे भगवन् आप अनेक रूप से उपस्थित हैं। वे सब सर्वदेवमय ईश्वर आपकी उपासना करते हैं। श्रीपुष्पदन्ताचार्य ने कहा है कि--

रुचीनां वैचित्र्यात्।

मार्ग रुचि के अनेक होने से अनेक है। सबके मत में परमेश्वर एक है। उस परमेश्वर की हम लोग वैष्णव मार्ग से अर्चा करते हैं। इसलिये वैष्णव सम्प्रदायी वैष्णवाचार्य भी भगवत उपदिष्ट मार्ग प्रवर्तक युग-युग में अनेक है। वैष्णव मार्गावलम्बी ४ सम्प्रदाय हैं। वे लोक में प्रसिद्ध है। इनमें विशेष भेद नहीं है। उपास्य देव एक होने से, इनके अनुष्ठान में भी भेद नहीं है। उपदेशादि भेद से सम्प्रदाय भेद दिखने में आता है। भेद होने से प्रयोजन हानि नहीं है। (२)

प्रश्न ३ -- किस प्रयोजन के लिये सम्प्रदाय के भेद

हैं ?

उत्तर -- जीव अनेक है, अनेक मार्ग से अनेक रूप परमेश्वर को एक-एक यथा रुचि अर्चाकर मोक्ष प्राप्ति रूप प्रयोजन लाभ करते हैं। (३)

प्रश्न ४ -- किस - किस विलक्षणता से ?

उत्तर -- तत्तद् विलक्षणता प्रतिपादक शास्त्रों में विलक्षणता है। (४)

प्रश्न ५ -- मार्ग भेद में सम्मति है, कि नहीं ?

उत्तर -- सब मार्ग अनेक रूप से एक भगवान् से कहे गये हैं, इसलिये सम्मति है। (५)

प्रश्न ६ -- सम्मति है तो आचरण क्यों नहीं होता है, असम्मति है तो क्यों अङ्गीकार करते हैं ?

उत्तर -- इसका उत्तर (रुचीनां वैचित्र्यात्) इत्यादि से पूर्व में हो चुका है। (६)

प्रश्न ७ -- ब्राह्मणादि वर्ण में रहने वाला सम्प्रदाय है, तो पहले वर्ण है कि सम्प्रदाय है ?

उत्तर -- पहले वर्ण है। (७)

प्रश्न ८ -- आश्रम में रहने वाला सम्प्रदाय है तो, पहले सम्प्रदाय है कि आश्रम है ?

उत्तर -- पहले आश्रम है। विष्णु पुराण में कहा है कि-

वर्णाश्रमवता पुरुषेण परः पुमान् ।

विष्णुराराध्यते पन्था नान्यत्तत्तोषकारणम् ।।

वर्णाश्रम वाले पुरुष से परब्रह्म विष्णु आराध्य है, उनकी

प्रसन्नता के लिये अन्य मार्ग नहीं है। (८)

प्रश्न ६ -- कबसे सम्प्रदाय है ? बहुकाल से प्रवृत्त है, तो मन्वादि ग्रन्थों में न प्रसिद्ध होने से और मन्वादि ग्रन्थों से विलक्षण होने से कैसे प्रमाण है ?

उत्तर -- मन्वादि पद से स्मृति ग्रहण करते हैं कि पुराणादिकों को भी केवल स्मृति ग्रहण करें तो स्मृति में अप्रसिद्ध यागादि कर्तव्य तत्त्वों का अप्रमाण प्रसंग है। मन्वादि पद से पुराणादि ग्रहण करें तो पुराण इतिहासादिकों में प्रसिद्ध निवृत्ति धर्म ग्रहण करने वाले हम लोगों से उपलब्ध है। मन्वादि ग्रन्थों में भी ध्यान जपादि संक्षेप से कहे गये हैं, इसलिये मन्वादि से विलक्षण सम्प्रदाय नहीं है। भागवत में कहा है कि--

स्वयंभूर्नारदः शम्भुः कुमारः कपिलो मनुः।
प्रह्लादो जनको भीष्मो बलिर्वैयासकिर्वयम्।।
द्वादशैते विजानीमो धर्मं भागवतं भटाः।।

(६/३/२०-२)

यम अपने दूतों से कहते हैं, हे वीरों! ब्रह्मा, नारद, शिव, सनत्कुमार, कपिल, मनु, प्रह्लाद, जनक, भीष्म, बलि, व्यास पुत्र और मैं ये १२ हम लोग वैष्णव धर्म जानते हैं। जो पूर्वकाल में वैष्णव धर्माचार्य सनक, नारद, ऋभु, अरुणि, शांडील्यादि और नव योगेश्वर प्रह्लाद, भीष्म, मनु, उद्धव, शुकादि वे सब वैष्णव अपने-अपने सम्वाद में वैष्णव धर्म कहे हैं। सनकादि सम्प्रदाय की अनादित्व भागवत २ स्कन्ध के ७ अध्याय में ब्रह्माजी ने कहा है कि--

तप्तं तपो विविधलोकसिसृक्षया मे,
आदौ सनात् स्वतपसः चतुः सनोऽभूत्।
प्राक्कल्पसम्प्लवविनष्टमिहात्मतत्त्वं,
सम्यग् जगाद मुनयो यदचक्षतात्मन्।

(भाग. २/७/५)

इसका अर्थ श्रीधर स्वामीजी ने किया है। पूर्व कल्प के प्रलय में छिन्न सम्प्रदाय आत्म तत्त्व के इस कल्प में सनकादिक सम्यक् कहे थे, अकथित मात्र वस्तु अपने मन से वे देखते हुये। भारत में भी मोक्षाचार्य सनकादिकों को ही कहा है।

सनः सनत्सुजातश्च सनकः ससनन्दनः।
सनत्कुमारः कपिलः सप्तमश्च सनातनः।।
सप्तैते मानसाः प्रोक्ता ऋषयो ब्रह्मणः सुताः।
ये सात ब्रह्मा के मन से उत्पन्न।
स्वयमागतविज्ञाना निवृत्तिं धर्ममास्थिताः।।
एते योगविदो मुख्याः सांख्यज्ञानविशारदाः।
आचार्या धर्मशास्त्रेषु मोक्षधर्मप्रवर्तकाः।।

(महा. शान्तिपर्व ३४०-७२-७४)

सनकादि के जन्म के बाद ब्रह्माजी ने कहा है कि ''स्वयं ज्ञान प्राप्त, निवृत्ति-धर्म प्रवर्तक'' वे सनकादि योगियों में मुख्य लोकाचार्य, मोक्ष शास्त्र के आचार्य और मोक्ष धर्म के प्रवर्तक हैं। इस प्रकार मेरे सम्प्रदायाचार्य श्रीनारदजी को निवृत्ति धर्म प्रवर्तकत्व लोकाचार्यत्व प्राप्त है। भारत, रामायण, भागवतादिकों में श्रीव्यास, श्रीवाल्मीकि, श्रीशुक, युधिष्ठिर, प्राचीनबर्हि कहे गए हैं और दक्ष

पुत्रादि उपदेश कथन से प्रसिद्ध हैं। इस सम्प्रदाय के सनकादि, नारदादि से लेकर प्रवृत्ति होने से तथा संसार के अनादि होने से मेरे सम्प्रदाय का अनादित्व है, और ब्रह्मवैवर्त में कहा है:--

अर्धरात्रे तु केषांचिद्दशम्या वेध इष्यते।

कपालवेध, इत्याहु आचार्या ये हरिप्रियाः ।।

किसी के मत में अर्धरात्रि में दशमी का वेध मानते हैं, सो हरिप्रिय आचार्य कपालवेध कहते हैं। यहाँ हरिप्रिया से श्रीनिम्बार्काचार्य का ग्रहण है। श्रीशंकराचार्यजी ने भी अपने सूत्र भाष्य में भागवतों ने ऐसा कहा है--इत्यादि से भागवत मत का कथन किया है और स्मार्त ग्रन्थों में अन्य मत के समान ही पृथक् वैष्णव मत का कथन है। और निर्णय सिन्धु में अरुणोदय वेध वैष्णव मत कहा है। तत्तद् व्रतादि स्वरूप माधवीय स्कान्द में--

यो मां पदया प्राप्तो हर्षवास उपस्थिते।

नैकादशीं त्यजेद्यस्तु तस्य दीक्षास्ति वैष्णवी ।।

परम पद प्राप्त होने पर हर्षवास उपस्थित होने पर जो पुरुष एकादशी नहीं त्याजता है, उसकी वैष्णवी दीक्षा है। और भी अन्य की अप्राप्ति होने से, दोष के अभाव होने से वैष्णवी दीक्षा ग्रहण करने वाले वैष्णव कहलाते हैं। गायत्री दीक्षा से द्विज होता है। द्विज के लिए प्रधान वैष्णवी दीक्षा में अधिकार है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य ये तीन द्विज कहलाते हैं। जयसिंह कल्पद्रुम में भी वैष्णव दीक्षा वालों को वैष्णवी एकादशी कही गयी है, अवैष्णवों की स्मार्त एकादशी कही गयी है।

शंका -- क्या आपके आचार्य प्राचीन हैं, क्या निम्बार्क

सम्प्रदाय पुराण में प्रसिद्ध है ?

उत्तर -- इसमें भविष्य पुराण का वचन है --

उदयन्व्यापिनी ग्राह्या कुले तिथिरुपोषणे।

निम्बार्को भगवान्येषां वांच्छितार्थफलप्रदः।

श्रीनिम्बार्क मत में व्रतादि-उपवास में उदयव्यापिनी तिथि ग्रहण करनी चाहिये। श्रीनिम्बार्क भगवान् जीवों की मनोकामना पूर्ण करने वाले हैं। इस श्रीव्यास वचन से श्रीनिम्बार्क सम्प्रदाय का एवं श्रीनिम्बार्क का प्राचीनत्व दिखाया है।

शंका -- भविष्य पुराण के इस व्यास वचन को बड़े लोगों ने देखा है, इसमें क्या प्रमाण है ?

उत्तर -- हेमाद्रि, निर्णय सिन्धु, विधि निर्णय आदि ग्रन्थ प्रमाण हैं। "उदयव्यापिनी ग्राह्या कुले तिथिरूपोषणे। निम्बार्को भगवान्येषां वांछितार्थ प्रदायकः ।।" इससे श्रीनिम्बार्क सम्प्रदायियों के लिए निर्णय-सिन्धु में जन्माष्टमी व्रत निर्णय किया है। इसको सब कोई जानते हैं।

शंका -- निर्णय सिन्धु में यह मत निम्बार्क मत खण्डन के लिये लिखा है ?

उत्तर -- खण्डन-मण्डन में तात्पर्य नहीं है किन्तु इस वचन से निम्बार्क सम्प्रदाय की निर्णयसिन्धु में प्राचीनता कही है और भगवान् शब्द के उच्चारण से सर्वज्ञता दिखलाई गई है। और अपनी प्रसिद्धि तथा श्रेष्ठता के लिये निर्णयसिन्धुकार ने अन्य को त्यागकर केवल निम्बार्क नाम उच्चारण किया है और इन वचनों से अपने में प्रमाण समझा है। पुराण प्रसिद्ध प्राचीन वचन को

नवीन ग्रन्थ में खण्डन के लिए कोई नहीं रखता है, किन्तु प्रमाण के लिये और निर्णय सिन्धुकार ने प्रारम्भ में ग्रन्थ के आरम्भ में कहा है कि पौराणादि ग्रन्थों को लेकर निर्णयसिन्धु नामक संग्रह करता हूँ। लोक में प्रत्यक्ष निम्बार्क–सम्प्रदायानुयायी विरक्त शम-दमादि युक्त वैष्णव ब्राह्मण और वैष्णव राजा लोग अन्य बहुत लोग इस देश में विद्यमान हैं, और यहाँ पर पृथ्वीराज महाराज से लेकर श्रीमान् जयसिंह आदि श्रीनिम्बार्कीय दीक्षा ग्रहण करने वाले इसको सबसे उत्तम मानने वाले प्रसिद्ध हैं। उनको साक्षात् श्रीकृष्ण ने दर्शन दिया था–यह बात जयसिंह कल्पद्रुम ग्रन्थ में कही गई है।

तद्वंशे वितते महांश्च मनुते धर्मैकसेतुर्महान्।
पक्षिराज इति प्रसिद्धमहिमः सत्सत्त्वतामग्रणीः ।।
राजा क्षत्रधुरंधरः समभवद्यस्याभवद्गोचरो,
वाचां यो मनसोप्यगोचरतरः कृष्णो महावारिधिः ।।

उस वंश में मैं वृद्धि को प्राप्त हूँ, और बड़ा माना जाता हूँ, जो धर्म के एक महा सेतु सत्पुरुषों में प्रधान, क्षत्रधारी, प्रबल, पक्षिराज नाम से महिमा प्रसिद्ध वाले राजा होते हुये जिस पक्षिराज के लिए जो मन, इन्द्रियों से, अति अगम्य महावारिधि कृष्णचन्द्र प्रकट होते हैं। यह पक्षिराज कृत मर्यादा शास्त्र के अनुकूल ही थी और वैष्णवता थी। शकुन्तला के प्रति दुष्यन्त वचन--

राजन्यतनयां वेद त्वामहञ्च सुमध्यमे।
पौराणां रमते चित्तमधर्मे न कदाचन।।

हे सुमध्यमे मैं आपको राजा की कन्या समझता हूँ इस लिए मेरा चित्त लगा है। पुरु वंश वालों को अधर्म में कभी प्रीति

नहीं होती है, इत्यादि से सदाचार और लोकाचार से धर्म में प्रमाण है। वैष्णवाचार्य प्राचीन है। इस काल में भी पहले के समान वेद, पुराण, इतिहास, मन्वादि के कथनानुसार ही वैष्णवाचार्य अनुष्ठान करते हैं। इससे थोड़े काल से वैष्णव की प्रवृत्ति कथन प्रश्न निरस्त हुआ। (९)

प्रश्न १० -- थोड़े काल से यदि धर्मादि निर्णय और धर्मों की विधि, उसके फल सब जगह लाभ होने से किस प्रयोजन के लिए प्रवृत्त है ?

उत्तर -- इसके उत्तर ११ वें प्रश्न में दे चुका हूँ।

प्रश्न ११ -- वेद पुराण इतिहासादिकों में अधिक धर्म निश्चय और धर्म फल निश्चय है, फिर नवीन रीति से क्या प्रयोजन हो सके हैं ?

उत्तर -- श्रौत स्मार्तादि वेद पुराण इतिहासादिकों में धर्म प्रतिपादक वाक्यों से वस्तु को एक जगह किया जाता है। जैसे मधुमक्खी नाना वृक्षों से रस लेकर एक जगह करती है, वैसे मेरे आचार्य लोग भी वेद पुराणादि इतिहासादिकों में वैष्णव धर्म प्रतिपादक जो वाक्य हैं, उनको एक जगह करते हैं। सो सब मिलकर ग्रन्थ कहलाता है, इसलिए अशास्त्रीय नहीं है। यह नियम न माने तो सब व्रत उनके फल सब जगह पुराणादिकों में प्रसिद्ध ही है फिर निर्णय सिन्धुकार ने पुराणादि वचनों को इकट्ठे कर निर्णयसिन्धु नामक ग्रन्थ किया सो उसका क्या प्रयोजन है। और मन्त्र, मन्त्रों की क्रियाएं सब ग्रन्थों में है फिर उन मन्त्र क्रियाओं को अन्य ग्रन्थों से इकट्ठा कर मन्त्रमहोदधि नामक ग्रन्थ

बनाने का क्या प्रयोजन है। इन सब ग्रन्थ बनाने में कई प्रयोजन है, वैसे मेरे आचार्यों को ग्रन्थ बनाने में कई प्रयोजन हैं। वेद के अति गम्भीर होने से पुराण इतिहासादि अनेक मुख से सुगम कर मन्द-बुद्धि वाले जनों की प्रवृत्तियों के लिए वेद पुराणोक्त मार्गानुसार ग्रन्थ रचना किये थे। (११)

प्रश्न १२ -- आचार्य कौन हैं .? वर्ण निर्देश देश निर्देश, वंश परम्परा निर्देश को कहें ?

उत्तर -- भागवत ११ वें स्कन्ध में उद्धव के प्रति भगवान् ने कहा कि--

एतावान् योग आदिष्टो मच्छिष्यैः सनकादिभिः।
सर्वतो मन आकृष्य मय्यद्धावेश्यते यथा।।

११-१३-१४

हे उद्धव जो योग आपसे पूछा गया सोई योग हंसावतार में मेरे शिष्य सनकादिकों ने मुझ से पूछा था, इस वचन से श्रीहंस भगवान् के शिष्य सनकादिक है। और सनकादिक के शिष्य श्रीनारदजी के सम्वाद--''अधीहि भगवइति'' छा. अ. ७, खण्ड १, मन्त्र १, इस उपनिषद् में श्रीसनत्कुमारजी के श्रीनारदजी के गुरु-शिष्य कार्य प्रसिद्ध है। इससे श्रीसनत्कुमारजी के शिष्य श्रीनारदजी हैं। श्रीनारदजी के शिष्य श्रीनिम्बार्कजी हैं। विष्णु यामल में कहा है कि--

नारायणमुखाम्भोजान्मन्त्रस्त्वष्टादशाक्षरः।
आविभूर्तः कुमारैस्तु गृहीत्वा नारदाय च
उपदिष्टः स्वशिष्याय निम्बार्काय च तेन तु

एवं परम्परा-प्राप्तो मन्त्रस्त्वाष्टादशाक्षरः ।।

श्रीमन्नारायण कमल रूपी मुख से अष्टादशाक्षर मन्त्र का प्रादुर्भाव हुआ उस मन्त्र को श्रीसनकादि ने ग्रहण किया। सनकादिक श्रीनारदजी को उपदेश दिये, श्रीनारदजी ने श्रीनिम्बार्कजी को उपदेश किये, श्रीनिम्बार्कजी, श्रीनिवासाचार्यजी को उपदेश किये। इस प्रकार मन्त्रराज लोक में विस्तृत है। श्रीसनकादिक के श्रीनारदजी के वर्ण ब्रह्मा के पुत्र होने से प्रसिद्ध है। श्रीनिम्बार्क तैलंग ब्राह्मण कुल में उत्पन्न होने से गुरु समर्पित देह से विप्र नैष्ठिक ब्रह्मचर्याश्रम सिद्ध है। और हम लोगों को भी ब्राह्मण कुल में उत्पन्न होने से गुरु समर्पित देह से ब्राह्मण वर्ण, ब्रह्मचर्याश्रम प्रसिद्ध है। और देश निर्देश श्रीनिम्बार्काचार्य से लेकर श्रीकेशवभट्टाचार्य तक ३० आचार्य तैलङ्ग ब्राह्मण कुल में उत्पन्न थे। श्रीकेशवाचार्य का मथुरादि में म्लेच्छाचार्य विजयार्थ आगमन हुआ था। बाद हम लोग के आचार्य इस देश के ब्राह्मण कुल में उत्पन्न होते आये हैं। (१२)

प्रश्न १३ -- ब्राह्मण से अन्य आपके आचार्य होते हैं, कि नहीं ?

उत्तर -- क्षत्रिय, वैश्य को वेदाध्ययन में अधिकार है, अध्यापन में नहीं है। शूद्र के लिए तो भागवत में कहा है कि-- "स्त्री शूद्र द्विज बन्धूनां त्रयी न श्रुति गोचरा" स्त्री, शूद्र तो ऋक्, यजुः, साम, श्रवण के अधिकारी नहीं है। श्रवण मात्र में अधिकार नहीं है, तब दीक्षा दान में कैसे अधिकार हो सकता है। भारत में धर्मोपदेश व्याध से ब्राह्मण को दिखाने में आता है, सो व्याध पूर्व जन्म में ब्राह्मण रहा। शापवश से नीच कुल में उत्पन्न हुआ।

ब्राह्मण की कृपा से उसका ज्ञान नष्ट नहीं हुआ था, इसलिये उपदेश दिया था। वस्तुतः शापवश से व्याध कुल में जन्म होने पर भी प्राचीन ब्राह्मण शरीराभिमान रहा था। इसलिए ब्राह्मण को ही उपदेश में अधिकार है, अन्य को नहीं हैं। (१३)

प्रश्न १४ -- ब्राह्मण से अन्य आचार्य होय तो शास्त्र विरुद्ध है ?

उत्तर -- प्रश्न ६ में इसका उत्तर दे चुका हूँ। (१४)

प्रश्न १५ -- ब्राह्मण से अन्य को अधिकार नहीं है, तो कैसे आचार्य होते हैं ?

उत्तर -- प्रश्न ७ में इसका उत्तर दे चुका हूँ। (१५)

प्रश्न १६ -- अहीन वर्ण उपदेशक हो तो, अन्य कल्याण के भागी कैसे होंगे ?

उत्तर -- इसके उत्तर दो प्रश्न में दे चुका हूँ। (१६)

प्रश्न १७ -- आप लोग उपदेश चार वर्णों को करते हैं कि ३ (तीनों) को या २ (दो) को ?

उत्तर -- ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, द्विज है, इनमें गर्भाधानादि संस्कार पूर्वक यज्ञोपवीत आदि ग्रहण और गायत्री मुख्य है। और गीताकार ने कहा है कि--"**येऽपि स्युः पापयोनयः ।।" स्त्रियो वैश्यास्तथा शूद्रास्तेऽपि यान्ति परां गतिम्। किं पुनर्ब्राह्मणाः पुण्याः भक्ता राजर्षयस्तथा।।** जो पापयोनि स्त्री विक्रयादिक करने वाले वैश्य तथा शूद्र मेरे भजन प्रभाव से मोक्ष पाते हैं तो पवित्र ब्राह्मण भक्त क्षत्रियों का क्या कहना है। चूहा यदि नदी तर जाते हैं, तो मछली को तरना कौन

कठिन है। और स्कन्ध में--"**यैर्न लब्धा हरेर्दीक्षा नार्चितो वा जनार्दनः।" ते नरा पशवो लोके किं तेषां जीविते फलम्।।** जिस पुरुष से वैष्णवी दीक्षा ग्रहण नहीं की गयी और जनार्दन की सेवा नहीं की गई, वे मनुष्य लोक में पशु हैं, उनके जीवन से क्या फल है। उनके जीवन निरर्थक हैं, जैसे अजा के गले में स्तन इत्यादि से भागवत शरणागति जीव मात्र के लिए है, किन्तु अधिकार भेद से उपदेश भेद है। क्रम दीपिका टीका में पुराण वचन है कि--

स्वाहा-प्रणव-संयुक्तं मन्त्रं शूद्रे ददद्विजः।
शूद्रो निरयगामी स्याद् द्विजः शूद्रोऽभिजायते।।

स्वाहा, औंकार युक्त मन्त्र शूद्र को जो ब्राह्मण देता है, सो शूद्र और ब्राह्मण दोनों नरक जाते हैं। और ब्राह्मण शूद्र होता है। और गायत्री ग्रहण बाद वैष्णवी दीक्षा में अधिकार है। गायत्री दीक्षा के बाद अन्य दीक्षा के निषेध नहीं है। गायत्री ग्रहण के बाद द्विज होने पर देव पूजन सबके लिए सर्व शास्त्र सम्मत है। देव पूजन मन्त्र बिना नहीं हो सकता है। जिस देवता की पूजा की जायेगी उस मन्त्र से पूजा होगी। दीक्षा लेने से मन्त्र लाभ होता है। दीक्षा हीन मन्त्र निष्फल है। यह सबके सिद्धान्त है। दीक्षा युक्त उपासक शैव-शाक्त, सौर्यादि भेद से कहा है। वैसे विष्णु दीक्षा से युक्त वैष्णव भागवत कहाते हैं। ब्रह्मवैवर्त पुराण में कहा है कि--

विष्णुकराद्विष्णु मन्त्रो यस्य कर्णे प्रविश्यते।
जीवन्मुक्तं वैष्णवं तं वेदाः सर्वे वदन्ति च।।

गुरु करने से विष्णु मन्त्र जिसके कान में प्रवेश होता है,

उस वैष्णव को सब वेद जीवन मुक्त कहते हैं। (१७)

प्रश्न १८ -- दीक्षा के बिना जाति नहीं होती है, और व्रत नहीं होता है, आपके उपदेश से क्या होगा और आपके उपदेश सबको न होने से उपदेश हीन पुरुषों के व्रत स्नानादि वृथा है, इसमें शास्त्र और विद्वानों की सम्मत नहीं है, तो क्यों विशेष आग्रह करते हैं ?

उत्तर - इस प्रश्न के उत्तर पहले हो चुका है। (१८)

प्रश्न १९ -- जैसे वर्णाश्रम धर्म वर्णन सब ग्रन्थों में है और कुलों के आचार हैं, वैसे आपके सम्प्रदाय और उसके फल का वर्णन क्यों नहीं है ?

उत्तर -- सम्प्रदाय वर्णन और उसके फल वर्णन भारत में कहा है, परम मोक्ष सम्प्रदायों के लक्षण मोक्ष धर्मान्तर्गत नारायणीयाख्यान में वैशपायन ने कहा है--**अहो एकान्तिनः सर्वान् प्रीणाति भगवान् हरिः। विधि प्रयुक्तां पूजां च गृह्णाति भगवान् स्वयम्।। ये तु दग्धाशया लोके पुण्यपापविवर्जिताः। तेषां त्वयाभिनिर्दिष्टा पारंपर्यागतागतिः। चतुर्थ्यां चैव वैगत्यां गच्छन्ति पुरुषोत्तमम्।। एकान्तिनस्तु पुरुषा गच्छन्ति परमं पदम्।।**

अहो भाग्य है विरक्त ज्ञानियों के ऊपर भगवान् हरि संतुष्ट होते हैं, और श्रद्धा से की हुई पूजा अङ्गीकार करते हैं। जो लोक में धन वासना रहित पुण्य पाप रहित हैं, उन्हीं की परम्परा से गुरु सम्प्रदाय में आना-जाना आपने देखा है। अनिरुद्ध, प्रद्युम्न, संकर्षण, को निरपेक्षित, अन्य वासुदेव भक्त पुरुषोत्तम को प्राप्त

होते हैं। विरक्त ज्ञानी पुरुष मोक्ष को प्राप्त होते हैं। **नूनमेकान्त धर्मोऽयं श्रेष्ठो नारायणप्रियः।** निश्चय है कि निष्काम धर्म वाले भक्त श्रीनारायण को प्रिय है। **अगत्या गतयः तिस्त्रो नियच्छत्यव्ययं हरिम्। सहोपनिषदाद् वेदाद् ये विप्राः सम्यगास्थिताः।। यजन्ति विधिमास्थाय ये चापि यागधर्मिणः। तेभ्यो विशिष्टां जानामि गतिमेकान्तिनां नृणाम्।।** अनिरुद्ध, प्रद्युम्न, संकर्षण, भक्त अव्यय हरि को प्राप्त होते हैं। उपनिषदों के सहित कर्म-काण्ड वेद में ब्राह्मण भले प्रकार स्थित होते हुए विधि अवलम्बन कर याग करते हैं, उनसे अधिक विरक्त भगवत् भक्तों को मैं जानता हूँ। इनका अर्थ नीलकण्ठ ने किया है। उसी जगह गीता में भगवान् ने कहा है कि--**मय्यावेश्य मनो ये मां नित्ययुक्ता उपासते। श्रद्धया परयोपेतास्ते मे युक्ततमा मताः।।** मेरे में मन लगाकर अति श्रद्धा युक्त होते हुए मेरे में तत्पर होते हुए तो मेरी उपासना करते हैं, वे मेरे में अतियुक्त है। और इसी में--**मन्मनाभव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु। मामेवैष्यसि सत्यं ते प्रतिजाने प्रियोऽसि मे।।** मेरे में मन लगावो, मेरे भक्त होवो मेरी सेवा करो, मुझको नमस्कार करो यह सब करने पर मुझको आप प्राप्त होयेगे, आप मेरे प्रिय है, इसलिए प्रतिज्ञा से कहता हूँ। और इसी जगह--**सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज। अहं त्वा सर्व पापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः।।** सब धर्मों को त्याग कर एक मेरे शरण में प्राप्त होवे। मैं तुम्हें भूत, वर्तमान, भविष्य, सब पापों से अलग कर दूँगा। आप सोच न करें। **अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते। तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम्।।** मेरे

से अन्य उपास्य न समझ कर मेरा ध्यान करते हुए जो जन मेरी उपासना करते हुए निरन्तर युक्त रहते हैं उन पुरुषों के योग नाम-ग्रहण क्षेम-नाम संचय दोनों की रक्षा मैं करता हूँ। वा प्राप्त कराता हूँ। **अपि चेत्सुदुराचारो भजते मामनन्यभाक्। साधुरेव स मन्तव्यः सम्यग्व्यवसितो हि सः ।।** यदि दुराचारी होय, किन्तु मेरा भजन करता है, तो वह महात्मा है, भले प्रकार मेरे में चित्त लगाकर भजन करता है, सोई महात्मा है। **क्षिप्रं भवति धर्मात्मा शश्वच्छान्तिं निगच्छति। कौन्तेय प्रतिजानीहि न मे भक्तः प्रणश्यति ।।** वह दुराचार त्यागकर जल्दी धर्मात्मा होता है, और निरन्तर शान्ति को प्राप्त होता है। हे कुन्ती पुत्र मेरे भक्त नष्ट नहीं होते हैं। भजन करने के लिये आप भी प्रतिज्ञा करें। और भी-- **ज्ञाननिष्ठो विरक्तो वा मद्भक्तो वानपेक्षकः। स लिङ्गनाश्रमात् त्यक्त्वा चरेदविधिगोचरः ।। न यस्य जन्मकर्माभ्यां न वर्णाश्रमजातिभिः। सज्जयतेऽस्मिनहं भावो देहे वै स हरेः प्रिय ।।** ज्ञानी वा विरक्त वा अन्य अनपेक्षक मेरे भक्त आश्रमों को त्यागकर विधि के आधीन न होकर मही में विचरते हैं, जिसकी जन्म कर्मों से वर्णाश्रम जातियों से आशक्ति नहीं होती है, यह शरीर मेरा है, ऐसा अभिमान भी नहीं होता है, वह हरि को प्रिय है, किन्तु यह दशा, प्रेमलक्षणा भक्ति काल में होती है। **देवर्षिभूततृप्तनृणां पितृणां न किंकरो नायम् ऋणि च राजन्। सर्वात्मना यश्शरणं शरंण्यं गतो मुकुन्दंथरिहृत्य कर्म। न काम कर्म बीजानां यस्य चेतसि सम्भवः। वासुदेवैकनिलयः स वै भागवतोत्तमः ।।** देव, ऋषि, भूत, भूत नाम मनुष्यादिक तृप्त है, जिससे वह मनुष्यों के

पितरों के और ऋषियों के सेवक नहीं है। हे राजन् संशय को त्यागकर शरीर, मन, वचन से शरण शरण्य मुकुन्द को जो प्राप्त है। कामना के बीज चित्त में रहित केवल एक वासुदेव में स्थिति वाला उत्तम वैष्णव है। इत्यादि वचनों से सम्प्रदाय और उसके फल वर्णन प्रसिद्ध है।

शंका -- वैष्णवों के कर्म नवीन न होय किन्तु सनकादि शिष्य परम्परा प्राप्त वैष्णव साधु ब्राह्मण से अन्य है ?

उत्तर -- वैष्णव साधु ब्राह्मण से अन्य नहीं है--

कविर्हरिरन्तरिक्षः प्रबुद्धः पिप्पलायनः।
आविर्होत्रोऽथ द्रुमिल श्चमसकरभाजनः ।।

कवि, हरि, अंतरिक्ष, प्रबुद्ध, पिप्पलायन, आविर्होत्र, द्रुमिल, चमसकर भाजन, वे ६ वैष्णव ब्राह्मण प्रसिद्ध हैं, और पराक्रमी एकाशी, पिता आज्ञापालन करने वाले महाबुद्धिमान् महावैदिक , यज्ञ, करने के स्वभाव वाले कर्म शुद्ध वैष्णव ब्राह्मण नव योगेश्वरों से अन्य होते हैं। (१६)

प्रश्न २० -- आपके आचार्यों से पूर्वाचार्य व्यासादिक छोटे हैं कि समान हैं कि अधिक ?

उत्तर -- मेरे आचार्य हंस सनकादि से व्यासादि की तुल्यता है, किन्तु व्यासादिक मेरे आचार्यों से उपदेश ग्रहण किये थे। पीछे भाष्यादिक गुरु परम्परा और व्यासादि के अनुकूल है। (२०)

प्रश्न २१ -- सकल धर्म मार्ग से वैष्णव धर्म मार्ग छोटा है कि समान है, तो तत्-तत् कर्तव्य ग्रन्थों के सब जगह

प्रचार क्यों नहीं है ?

उत्तर -- इसका उतर दे चुका हूँ। (२१)

प्रश्न २२ --अधिक है तो प्रमाण कहें ?

उत्तर -- इसका भी उत्तर हो चुका है। (२२)

प्रश्न २३ -- शूद्रों को उपदेश आप लोग करते हैं तो उत्तम शूद्रों को करते हैं कि नीच शूद्रों को, कि सब शूद्रों को?

सबको उपदेश करते हैं, तो अधमों को उपदेश क्यों नहीं करते हैं ? यदि उपदेश करते हैं, तो उनके साथ

आपकी वैष्णवता तुल्य है कि छोटी है, तुल्य है तो उनके पकाए अन्नादि क्यों नहीं अंगीकार करते हैं ?

अंगीकार करते हैं तो वैष्णव दीक्षा में सब वर्ण आश्रम तुल्य हुए, तब आप लोग भी अधन्य हुए।

उत्तर -- दीक्षा तुल्य ही है, किन्तु दीक्षा प्रयुक्त कर्तव्य भेदक जाति है। हमारी दीक्षा से अतुल्य वा छोटी उनकी दीक्षा है। सब वर्ण समान नहीं है किन्तु--

यतः प्रवृत्तिर्भूतानां येन सर्वमिदं ततम्।
स्व कर्मणा तमभ्यर्च्य सिद्धिं विन्दति मानवः।।

जिससे भूतों की प्रवृत्ति होती है जिससे यह सब जगत् पूर्ण है, उसकी अपने-अपने कर्म से मनुष्य सेवा कर ज्ञान सिद्धि को प्राप्त होता है। इत्यादि वचन से वैष्णव धर्म के अधिकारी निर्णय किये हैं। जो वेद के अधिकारी नहीं हैं, वे सब भी मेरे उपदेश बाद अपने वर्ण के अनुसार भगवत् आराधना करते हैं, और गायत्री ग्रहण बाद ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, द्विज कहाते हैं, वे द्विज तुल्य

ही है, सबको समान मानकर पाक भोजनादि नहीं होते हैं। होते तो सब एक ही हो जावे किन्तु सबसे उत्तम ब्राह्मण है, उससे नीचे क्षत्रिय, उससे नीचे वैश्य। ऐसा ही वैष्णव दीक्षा में है। और यदि शूद्रों को उपदेश न हो तो-

स्त्रीशूद्रद्विजबन्धूनां त्रयी न श्रुतिगोचरा।

कर्मश्रेयसि मूढानां श्रेय एवं भवेदिह।।

वैदिक कर्म में अनधिकारी स्त्री, शूद्र, द्विज बन्धुओं के ऋक् यजु, साम, श्रवण के विषय नहीं हैं, इस महाभारत से उनका कल्याण होगा ऐसा कहकर व्यासजी ने उनके उपकारार्थ कृपा कर महाभारत किया सो, भारत करना ही व्यर्थ है, इससे सत् शूद्रों के लक्षण कहें, यह भी पक्ष निराश हुआ। (२३)

प्रश्न २४ -- सत् शूद्र हैं तो कौन हैं, उनके लक्षण कहें ?

उत्तर -- २३ प्रश्न में इसके उतर हो चुका। (२४)

प्रश्न २५ -- उपदेश के रामकृष्णादि के मन्त्रों में न्यूनता, अधिकता है कि समानता है, समानता है तो अन्य मन्त्रों को त्यागकर एक ही मन्त्र से उपदेश आप लोग क्यों नहीं करते हैं ?

मोक्षदाता होने से सब भागवत मन्त्र तुल्य हैं। गोपालतापनी, रामतापनी, नृसिंहतापनी, नारायण तापनी, उपनिषद् प्रतिपाद्य सब मन्त्र मोक्ष देने में समर्थ हैं किन्तु परम्परा से प्राप्त मन्त्र फलदायक होते हैं। कहा भी है--

सम्प्रदाय विहीना ये मन्त्रास्ते निष्फला मताः। अतः

परम्परा प्राप्तास्ते कृष्णकरुणान्विताः ।।

जिन मन्त्रों का सम्प्रदाय में उपदेश नहीं होता है, वे निष्फल हैं। परम्परा प्राप्त मन्त्र श्रीकृष्ण की कृपा युक्त होते हैं।(२५)

प्रश्न २६ -- एक ही मन्त्र सब शिष्यों को क्यों नहीं देते हैं ?

उत्तर -- जैसा अधिकारी होता है, वैसा मन्त्र दिया जाता है, इसका उतर पूर्व में हो चुका है। (२६)

प्रश्न २७ -- सब मन्त्र शास्त्र से मोक्षदाता समान ही है तो न्यूनता कैसे ?

उत्तर -- न्यूनता नहीं है। (२७)

प्रश्न २८ -- प्रशंसा, उपपत्ति समान नहीं है, तब भिन्न-भिन्न मंत्र ग्रहण क्यों होता है ?

उत्तर -- इसका भी उत्तर हो चुका है। (२८)

प्रश्न २९ -- शैव शाक्त मंत्र मोक्ष देते हैं, कि नहीं ?

उत्तर -- इसका उत्तर सम्प्रदाय भेद से हो चुका है और जो-जो उपासक हैं, उनको-उनको उस-उस देवता प्राप्ति रूप मोक्ष सबका होता ही है। बृहन्नारदीय में कहा है कि--**अभ्यर्च्य विष्णुमीशानं तत्तत्सारूप्यतां व्रजेत्**। विष्णु और शिव की आराधना कर विष्णु और शिव सारुप्य प्राप्ति रूप मोक्ष को प्राप्त होते हैं। इसी से मोक्षदाता हैं तो निन्दा कैसे करते हैं, नहीं मोक्षदाता हैं, तो उनसे मोक्ष प्रतिपादक शास्त्र की क्या गति है। इन दोनों प्रश्नों के उतर हो चुके हैं। (२९)

प्रश्न ३० -- मोक्षदाता हैं तो निन्दा क्यों करते हैं ?

उत्तर -- इसका उतर हो चुका। (३०)

प्रश्न ३१ -- नहीं मोक्षदाता हैं तो उनसे मोक्ष प्रतिपादक शास्त्र की क्या गति है ?

उत्तर -- इसका भी उतर हो चुका। (३१)

प्रश्न ३२ -- जो पत्नी ग्रहण नहीं किये हैं, उनका दीक्षा देने में अधिकार है कि नहीं ?

उत्तर -- अभ्यासविधिमानाद्यो गुरुः सत्यपरायणः। वानप्रस्थो गृहस्थो वा ब्रह्मचर्यस्थितोऽपि वा।।

श्रीनारद पंचरात्र में दीक्षा प्रकरण में कहा है कि अभ्यास, विधि-प्रमाण से जो गुरु से सत्योपदेश ग्रहण किये हैं, वह वानप्रस्थ हो वा गृहस्थ हो वा ब्रह्मचारी हो, वे ही दीक्षा देवें केवल एक दण्डी सन्यासी दीक्षा न देवें। इनके लिए विधि नहीं है और हमारे आचार्य सनकादि, नारदादि नैष्ठिक ब्रह्मचारी लोक प्रसिद्ध है। (३२)

प्रश्न ३३ -- आप लोगों को अवश्य कंर्त्तव्य कौन धर्म हैं ?

उत्तर -- इसका उत्तर ३४ वें प्रश्न में हो चुका। (३३)

प्रश्न ३४ -- वर्णाश्रम में गणना आपकी है कि नहीं?

उत्तर -- वर्णाश्रम धर्म वृद्धि के लिए और हरि पूजा अधिकार सिद्धि के लिए सन्ध्या गायत्री जप आवश्यक पहले हैं, बाद में हरि ध्यानादिक आवश्यक है। छान्दोग्य उपनिषद् परिशिष्ट में कहा है कि--

संध्यालोपस्य यः कर्त्ता स्नानशीलश्च यः सदा।

दन्तोषानोपसर्पन्ति स गरुत्मानिवोरगाः: ।।

जो सन्ध्या नहीं करता है, स्नान नित्य करता है, काठ से दांत नहीं धोता है, वह भारी अजगर सर्प है और याज्ञवल्क्यजी ने कहा है कि--

इज्याचारदमाहिंसा दान-स्वाध्यायकर्मणाम्।

अयं तु परमो धर्मो यद्योगेनात्मदर्शनम्।।

पूजा, क्रिया, इन्द्रियों के दमन, अहिंसा, दान, वेदाध्ययन इन सब कर्मों का ही परम फल आत्म दर्शन है। इनके ही सम्बन्ध से आत्म दर्शन होता है, इनके करने से अन्तःकरण शुद्धि, शुद्धि होने से आत्म प्राप्ति की इच्छा इससे आत्म साक्षात्कार, इस प्रकार परम फल आत्मदर्शन है। और भागवत में--

तस्माद् भारत सर्वात्मा भगवान् हरिरीश्वरः।

श्रोतव्यः कीर्तितव्यश्च ध्येयः पूज्यश्च नित्यदा।।

सर्वपुंसां परो धर्मो यतो भक्तिरधोक्षजे।

अतः पुम्भिर्द्विजाः श्रेष्ठा वर्णाश्रमविभागशः,

स्वानुष्ठितस्यधर्मस्य संसिद्धिर्हरितोषणम्।।

हे भारत, सर्वात्मा भगवान्, ईश्वर, हरि श्रवण, कीर्तन, ध्यान का विषय निरन्तर है। मनुष्यों का यही परम धर्म है, जिससे हरि में भक्ति हो। हे द्विज श्रेष्ठ, वर्णाश्रमानुसार से, पुरुषों से अनुष्ठित धर्म के फल हरि की प्रसन्नता है। और भारत में विष्णु सहस्रनाम प्रकरण में--

को धर्मः सर्व धर्माणां भवतः परमो मतः।

किं जपन्मुच्यते जन्तुर्जन्म संसार बन्धनात्॥

युधिष्ठिरजी भीष्मजी से प्रश्न करते हैं कि शैव, गाणपत्य, सौर्य, शाक्त, पाशुपत, जैमिनि, गोतम, कपिल, पातञ्जल वैष्णव इन सब धर्मों में आपके अभिमत श्रेष्ठ कौन धर्म है, किसको उत्तम मानते हैं और किसके जाप से जीव जन्म रूप संसार बन्धन से छूटता है।

एष मे सर्वधर्माणां धर्मोऽधिकतमो मतः।
यद्भक्त्या पुण्डरीकाक्षं स्तवैरर्चेन्नरः सदा॥

सब धर्मों में मेरे को यह धर्म सबसे उत्तम माननीय है, जिस धर्म से, प्रीति से, स्तोत्र से, निरन्तर मनुष्य विष्णु की आराधना करता है। (३३-३४)

प्रश्न ३५ -- सन्ध्यादि विहीन अब्राह्मण आपकी सम्मति में है कि नहीं ?

उत्तर -- इसका उत्तर ३४ प्रश्न में हो चुका। (३५)

प्रश्न ३६ -- सन्ध्यावन्दनादि न करने से जो पाप होता है, उसकी निवृत्ति के लिए प्रायश्चित में आपकी सम्मति है, कि नहीं?

उत्तर -- इसका उत्तर ३७ प्रश्न में हो चुका। (३६)

प्रश्न ३७ -- भगवत् सेवादि विलम्ब भय से सन्ध्या न हुई तो प्रायश्चित्त में आपकी सम्मति है कि नहीं ?

उत्तर -- भगवत् सेवादि विलम्ब भय से सन्ध्या न हुई तो प्रायश्चित्त युक्त है, किन्तु भगवत्-स्मरण ही प्रायश्चित्त हो चुका। अन्य प्रायश्चित्त करने का प्रयोजन नहीं है। यह बाल

शांकर भाष्य में कहा है--

प्रमादात्कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताध्वरेषु यत्।
स्मरणादेव तद्विष्णोः सम्पूर्णं स्यादिति श्रुतिः ।।

प्रमाद से कर्म करने वालों के कर्म यज्ञों में च्युति हो तो विष्णु के स्मरण से वह कर्म पूर्ण होता है। वृद्ध शातत्व वचन है कि-

पक्षीय वासाद्यत्पापं पुरुषस्य प्रणस्यति।
प्राणायामशतेनैव यत्पापं नश्यते नृणाम्।
क्षणमात्रेण तत्पापं हरेर्ध्यानाद्विनश्यति ।।

एक पक्ष अपवित्र जगह में बास से जो पाप होता हैं, सो सौ प्राणायाम करने से नष्ट होता है। सैंकड़ों प्राणायाम करने से जो पाप नष्ट होता है, सो क्षण मात्र हरि के ध्यान से नष्ट होता है।

पवित्राणां पवित्रं यो मंगलानाञ्च मङ्गलम्।
दैवतं देवतानां च भूतानां योऽव्ययः पिता ।।

मुक्त जीवों में विलक्षण पवित्र, मंगलों में विलक्षण मंगल, देवताओं में अन्तर्यामी धर्म से एक रस जो जगत् के पिता हैं, और भारत में--

मेरुमन्दरमात्रोऽपि पापराशिश्च कर्मणाम्।
केशवं वैद्यमासाद्य दुर्व्याधिरिव नश्यति ।।

सुमेरु के शिखर बराबर पाप की राशि केशव को प्राप्त करने पर नष्ट होती है, जैसे सद् वैद्य प्राप्त होने पर राजयक्ष्मा रोग नष्ट होता है। (३६-३७)

प्रश्न -- ३८ -- गृहस्थों को पञ्चदेव पूजन आवश्यक

है कि नहीं ?

उत्तर -- जिसका जिससे प्रयोजन रहता है, वह उसकी पूजा करता है, जिसको पञ्चदेव से प्रयोजन है, वह पंचदेव की पूजा करते हैं, जिसको एक देव से प्रयोजन है, वह एक देव की करते हैं। और एक देव की पूजा करने वाले को पंचदेव पूजा करने में हानि नहीं हैं, किन्तु उनको तो एक देव से ही समय नहीं मिलता है, और पूजा करने के लिए अपने योग्यतानुसार सबको अधिकार है। ब्रह्मवैवर्त में भगवान् कहते हैं कि--

स्नात्वा नित्यक्रियां कृत्वा धृत्वा धौते च वाससी।
संपूजयेद् देवषट्कं च संयतो भक्तिपूर्वकः।।
गणेशं च दिनेशं च वह्निं, विष्णुं शिवं शिवाम्।
संपूज्य देवषट्कं च स्वाधिकारेण पूजनम्।।

स्नानकर, नित्य क्रियाकर पवित्र वस्त्र धारण कर, जितेन्द्रिय भक्तिपूर्वक ६ देवों की पूजा करें। गणेश, सूर्य, अग्नि, विष्णु, शिव और शक्ति इन सबकी अपने अधिकार के अनुसार पूजा करे। (३८)

प्रश्न ३९ -- पार्थिव पूजन बिना गृहस्थों को भोजन करना उचित है कि नहीं ?

उत्तर -- देव पूजन के बिना सब मनुष्यों को भोजन करना अनुचित है। जिस देव में जिसकी रुचि है, उस देव के पूजन कर भोजन करना चाहिए यह नियम है। याज्ञवल्क्यजी ने कहा है ''**स्नात्वा देवान्पितृंश्चैव तर्पयेदर्चयेत् तथा**'' स्नान कर देवों की पूजा करें, पितरों का तर्पण करें। मिताक्षरों में इसका अर्थ-मध्याह्न

से पहले शास्त्र विधि से नद्यादिकों में स्नान कर सन्ध्यादिक कर्म कर गृहदेव पितरों और ऋषियों को तीर्थ जल से तर्पण कर, बाद में हरि, हर, हिरण्यगर्भादिकों में जिसमें रुचि हो उसको अपनी वासना के अनुसार ऋक्, यजु, साम मन्त्रों से चतुर्थी विभक्ति के सहित उस देव के नाम के आगे ''नमः'' पद जोड़कर जैसे ''कृष्णाय नमः'' आराधना करे। अधिकारी पर नारद पञ्चरात्र में भी कहा है कि--

कुर्यान्मृण्मयं वापि लिङ्गं पूजितुमुद्यतः।
धनादिसहितं चेह परत्र वै सुखाय च।।
सन्ध्यामुपास्य त्रिः कृत्वा मदादिपरिभावितम्।
लिङ्गं शैवं, प्रतिष्ठाप्य विसर्ज्य च समर्चितम्।।

लिङ्ग पूजा की श्रद्धा वाले धन, लोक, परलोक, सुख के लिए मृत्तिकामय लिङ्ग बनावें, सन्ध्याकाल में ३ (तीन) आवृत्ति कर परिभावित शिव लिङ्ग प्रतिष्ठा पूजा विसर्जन करें। (३९)

प्रश्न ४० -- बलि वैश्वदैवादि करना चाहिए कि नहीं ?

उत्तर -- ''**कर्त्तव्यं वैश्वदेवं वै गृहस्थैः सर्वदा गृहे**''- गृहस्थों को श्रीव्याासजी ने कहा है कि - वैश्वदेव करें।(४०)

प्रश्न ४१ -- भगवत् निवेदित वस्तुओं के ग्रहण में विधि निषेध की क्या गति है ?

उत्तर -- नारद पञ्चरात्र में कहा है कि--

गृहस्थैस्तु सममेति विधिना यन्निवेदितम्।
गुर्वादिभिः कृपया दत्तं तत्तु ग्राह्यमेव च।।

गृहस्थों से, विधि से, देव निवेदित वस्तु गुरु कृपाकर प्रसाद देवें तो ग्रहण किया जाय। भागवत में--"**उच्छिष्टभोजिनो दासा तव मायां जहेमहि**" आपके अच्छिट भोजन करने वाले सेवक हम लोग आपकी माया से तर जायेंगे। (४१)

प्रश्न ४२ -- अन्य देव निवेदित वस्तु ग्रहण करनी चाहिये कि नहीं ?

उत्तर -- आचारादर्श में कहा है कि--

विप्रेभ्यश्च तथा देयं ब्राह्मणे यन्निवेदितम्।
वैष्णवं सात्वतेभ्यश्च भस्मांगेभ्यश्च शाम्भवम्।।
सौरगणेभ्यः शाक्तेभ्य अत्रापि यन्निवेदितम्।
स्त्रीभ्यश्च देयं मातृभ्यो यत्तु किंचिन्निवेदितम्।।
भूतप्रेतपिशाचेभ्यो यत्तु दीनेषु निक्षिपेत्।

ब्रह्मा को में निवेदित वस्तु ब्राह्मणों के लिये देना, विष्णु निवेदित सात्विक पुरुषों के लिये देना, शिव निवेदित शैवों को देना, सूर्य निवेदित सौर्य को देना, शक्ति निवेदित शाक्तों को देना, इसलिए वैष्णवों को विष्णु निवेदित में ही अधिकार है। (४२)

प्रश्न ४३ -- आपके मार्ग में तिलक कैसा है, किस द्रव्य से होता है ?

उत्तर -- प्रश्न ४३ का उत्तर ४६ प्रश्न में हो चुका ।।४३)

प्रश्न ४४ -- भगवान् के और उनकी प्रिया के कैसा तिलक है, सो कहें ?

उत्तर -- भगवान् को चन्दनादि से ऊर्ध्वपुण्ड्र तिलक

विधान है, गौतमीय तन्त्र में कहा है कि--

दिव्यमालाम्बरधरं दिव्यगन्धानुलेपनम्।
ललाटे हृदये कुक्षौ कट्यां बाहोश्च पार्श्वयोः ।।
विराजते ऊर्ध्वपुण्ड्रेण चन्दनेन विभूषितम्।

दिव्य माला वस्त्र धारण करने वाले, दिव्य गन्ध लेपन करने वाले, ललाट में, हृदय में, कुक्षि में, कटि में, बाहों में, पार्श्वों में ऊर्ध्वपुण्ड्र चन्दन से विभूषित हरि विराजते हैं, और हरिवंश में--''**आलोल कुण्डलयुतं हरिचन्दनचर्च्चितम्**'' कपोल पर्यन्त कुण्डल युक्त चन्दन से विभूषित हरि, हरि है और भगवत्प्रिया के लिए ब्रह्मवैवर्त पुराण में कहा है कि--

कस्तूरी बिन्दुभिर्युक्तं चन्दनेन्दुसमन्वितम्।
दीप-दीप प्रभाकरं सिन्दूरं बिन्दुसुन्दरम्,
दधाति भालमध्ये च सीमन्ताधः स्थलोज्ज्वले ।।

कस्तूरी बिन्दुओं से युक्त चन्द्राकार चन्दन और प्रज्वलित दीप के प्रभा के समान बिन्दु संयुक्त सिन्दूर मस्तक के मध्य केश के नीचे प्रियाजी धारण करती है। (४४)

प्रश्न ४५ -- आपके शिष्यों के और उनकी स्त्रियों के समान ही तिलक हैं कि विलक्षण हैं, सो कहें ?

उत्तर -- पद्म पुराण में कहा है कि--

एतद्द्वादशपुण्ड्राणि ब्राह्मणः सततं वहेत्।
उर्ध्वपुण्ड्रे च तन्मूर्तिं ध्यात्वा मन्त्रेण धारयेत्।।
चत्वारि भूभुजाश्चैव पुण्ड्राणि द्वे विशां पतेः।
एकं पुण्ड्रं च नारीणां शूद्राणाञ्च विधीयते ।।

ललाटे हृदि बाह्वोश्च चतुः पुण्ड्राणि धारयेत्।

ललाटे हृदये द्वे तु भाले त्वेकं विधीयते।।

वे १२ ऊर्ध्वपुण्ड्र ब्राह्मण निरन्तर धारण करें और ऊर्ध्वपुण्ड्र में भगवान् की मूर्ति का ध्यान मन्त्र से धारण करें। क्षत्रिय ४ ऊर्ध्वपुण्ड्र धारण करें, वैश्य २ धारण करें, शूद्र और स्त्री १ धारण करें। क्षत्रिय ललाट, हृदय, बाहु २ में धारण करें, ललाट, हृदय में वैश्य धारण करें। शूद्र और स्त्री ललाट में धारण करें, श्वेत ऊर्ध्वपुण्ड्र का विधान है। (४५)

प्रश्न ४६ -- ऊर्ध्वपुण्ड्र धारण में द्रव्य भेद में क्या प्रमाण है ?

उत्तर -- वासुदेवोपनिषद् में कहा है कि--

ऊर्ध्वपुण्ड्रं तिलकं तु सर्ववर्णाश्रमिभिः,

गोपीचन्दन पङ्केन ललाटं यस्तु लेपयेत्।

एकदण्डी त्रिदण्डी वा स वै मोक्षं समश्नुते,

गोपीचन्दनलिप्ताङ्गो जपहोमादिकं कृतम्।।

न्यूनं सम्पूर्णतां याति विधानेन विशेषतः।

ऊर्ध्वपुण्ड्र तिलक सब वर्णाश्रमों से धारणीय है। गोपीचन्दन के पंक से लिप्त अंग ललाट एक दण्डी वा त्रिदण्डी मनुष्य मोक्ष को प्राप्त होता है। गोपीचन्दन लिप्ताङ्ग पुरुष जप होमादिक जो किया था उसमें जो न्यूनता रही सो सब विधि से पूर्ण हो चुकी।

ब्राह्मणानां तु सर्वेषां वैष्णवानामनुत्तमम्।

गोपीचन्दनवारिस्थमूर्ध्वपुण्ड्रं विधीयते।।

सब ब्राह्मण वैष्णवों को उत्तम गोपीचन्दन से जल के

सहित ऊर्ध्वपुण्ड्र विधान है और गोपीचन्दन भगवत् को प्रिय है। यह ब्रह्मादि से धारित है। श्रुति कहती है--

तदु होवाच भगवान् वासुदेवः,
वैकुण्ठस्नानोद्भवं मम प्रीतिकरं,
मम भक्तैर्ब्रह्मादिभिर्धारितम्,
गोपीचन्दनं ममाङ्गे प्रतिदिनमालिप्तं,
गोपी प्रक्षालनात् गोपीचन्दनमाख्यातं
ममांगे लेपनं पुण्यं चक्र-,
तीर्थादिसंस्थितं पीतवर्णं मुक्तिसाधनं भवति ।।

भगवान् वासुदेव बोले वैकुण्ठ स्थान से उत्पन्न मेरी प्रीतिकारक मेरे भक्त ब्रह्मादि देवों से धारित गोपीचन्दन प्रतिदिन मेरे अंग में लिप्त है। गोपियों के धोने से, लोक में, प्रादुर्भाव होने से गोपीचन्दन कहाता है। मेरे अंग में लेपन पवित्र है। चक्र तीर्थादि में स्थित शंख चक्रों से युक्त पीतवर्ण मुक्ति साधन है। गरुड़ पुराण में श्रीनारदजी कहते हैं कि--

यो मृत्तिकां द्वारवतीसमुद्भवां करे समादाय ललाटके बुधः ।
करोति नित्यं त्वचि चोर्ध्वपुण्ड्रं, क्रियाफलं कोटिगुणं सदा भवेत्।।
क्रियाविहीनं यदि मन्त्रहीनं, श्रद्धाविहीनं यदि कालवर्जितम्।
कृत्वा ललाटे यदि गोपीचन्दनं प्राप्नोति तत्कर्मफलं सदाक्षयम्।।

जो पुरुष विवेकी द्वारका में उत्पन्न मृत्तिका को हाथ में लेकर ऊर्ध्वपुण्ड्र निरन्तर करता है, उसको कर्म के फल कोटिगुण अधिक होता है। यदि क्रिया रहित, मन्त्र रहित, श्रद्धा रहित, समय रहित ललाट में गोपीचन्दन करे उस कर्म का अक्षय फल

निरन्तर प्राप्त करता है। काशी खण्ड में यमदूतों से कहा गया है-

यद्भाले चोर्ध्वपुण्ड्रं वै गोपीचन्दनलांछितम्,
ज्वलदंगारवत्सोऽपि दूरे त्याज्यः प्रयत्नतः ।।
गोपीचन्दनलिप्तांगो दृश्यते चेदधः कुतः,
गोपीमृत्तुलसीशंखः शालग्रामः स च धृतः ।
गृहेऽपि यस्य पञ्चैते तस्य पापभयं कुतः ।।

जिसके ललाट में गोपीचन्दन के चिह्न हैं, वह प्रज्वलित अग्नि के समान है, दूर त्यागने योग्य है। गोपीचन्दन लिप्तांग दृष्टि पथ हो तो पाप कहाँ है? गोपी मृत्तिका, तुलसी, शंख, शालिग्राम, ये जिसके गृह में रहते हैं, उसको पाप से भय कहाँ है? पद्मपुराण में--

सुस्नातः सर्वतीर्थेषु सर्वयज्ञेषु दीक्षितः ।
धारयेदूर्ध्वपुण्ड्रं यो वैष्णवः शुभया मृदा ।।

जो सर्व तीर्थों में स्नान करता, सब यज्ञों में दीक्षित वैष्णव है, सो शुभ मृत्तिका से ऊर्ध्वपुण्ड्र धारण करें, गोपीचन्दन के न रहने पर तिलक द्रव्य के नियम पद्म में कहा है--

पर्वताग्रे नदीतीरे बिल्वमूले जलाशये ।
सिन्धुतीरे च वल्मीके हरिक्षेत्रे विशेषतः ।।
विष्णोः पादोदकं यत्र प्रवाहमिति नित्यशः ।
पुण्ड्राणां धारणार्थाय गृहणीयात्तत्र मृत्तिकाम् ।।

पर्वत शिखर में, नदी तीर में, विल्व मूल में, नदी तट में, समुद्र तीर में, वल्मीकि जड़ में, हरिक्षेत्र में, विष्णु के पादोदक प्रवाह में, ऊर्ध्वपुण्ड्र धारण के लिए मृत्तिका ग्रहण करें।

''**श्री रङ्गे वेङ्कटाद्रौ च श्रीकूर्मे द्वारके शुभे।**'' और श्रीरंग में, वेकटगिरि में, कूर्मक्षेत्र में, द्वारकाक्षेत्र में ऊर्ध्वपुण्ड्र के लिए मृत्तिका ग्रहण करें। और कूर्म पुराण में कहा है कि-- ''**कञ्जाकारं च मध्ये वै धारयेद्धरिमन्दिरम्।**'' ऊर्ध्वपुण्ड्र रूप हरि मन्दिर में, नेत्र के मध्य में जो काला बिन्दु है, उसके बराबर श्यामबिन्दुश्री के सहित हरि को धारण करें।

शंका -- श्याम बिन्दुश्री और हरि एकस्वरूपा कैसे होते हैं ?

उत्तर -- एक ही शालिग्राम जैसे लक्ष्मीनारायण हैं, वैसे एक श्यामबिन्दु श्री और हरि एकस्वरूप है। उसी जगह श्रीनारदजी ने भी कहा है कि--''**भ्रुवोर्मुक्ताकारसमं धारयेद्धरिमन्दिरे।**'' मुक्ता बिन्दु के बराबर बिन्दु ऊर्ध्वपुण्ड्र रूप हरि मन्दिर के मध्य भ्रू में धारण करें। इसी से ४३ वें प्रश्न का उत्तर हो चुका । (४६)

प्रश्न ४७ -- तिलक के आकार भेद में क्या प्रमाण है ?

उत्तर -- महोपनिषद् में श्रीसनत्कुमारजी ने आकार भेद में प्रमाण कहा है--

नासिकाया अर्धमारभ्य ललाटान्तं समर्चितम्।
साधिकांगुलान्तरामधिकं तु ततोत्तरम्।।
रेखाद्वयं विनिर्माय कार्यं हि हरिमन्दिरम्।
ब्रीहिमात्रं पृथु पार्श्वे सार्धं च चतुरंगुलम्।।

अर्ध नासिका से लेकर ललाट में केश पर्यन्त छः अंगुल तक खड़ी धानमात्र मोटी रेखा दो बना कर दिव्य ऊर्ध्वपुण्ड्र रूप हरि मन्दिर निर्माण करें। पद्म में कहा है कि--

एकान्तिनो महाभागाः सर्वभूतहिते रताः।

सान्तरालां प्रकुर्वन्ति पुण्ड्रं हरिपदाकृतिम् ।।

विरक्त महाभागी सब जीवों में दयावान् छिद्र के सहित हरिपादाकृति ऊर्ध्वपुण्ड्र करते हैं।

शंका -- महोपनिषद् श्रुति से हरिमन्दिर रूप ऊर्ध्वपुण्ड्र कहा है। पद्मपुराण से हरि पादाकृति कहा है, परस्पर विरोध है। दोनों में भेद होने से कौन मुख्य, कौन गौण है ?

उत्तर -- दोनों में भेद नहीं है। उसी जगह कहा है कि-

ऊर्ध्वपुण्ड्रस्य मध्ये तु विशाले सुमनोहरे।
लक्ष्म्या सार्धं समासीनो देवदेवो जनार्दनः ।।

विशाल मनोहर ऊर्ध्वपुण्ड्र के मध्य में लक्ष्मी सहित जनार्दन विराजमान हैं। यहाँ एक श्यामबिन्दु में जैसे लक्ष्मी जनार्दन का समावेश है, तैसे एक ऊर्ध्वपुण्ड्र में हरिमन्दिर और हरिपदाकृति का समावेश है, और वेद हिरण्यकेशि शाखा में कहा है कि-

हरेः पादाकृतिमात्मनो हिताय मध्यच्छिद्रंमूर्ध्वपुण्ड्रं यो धारयति। परस्यास्य प्रियो भवति स पुण्यभाग् भवति, स मुक्तिभाग् भवति।।

जो अपने कल्याण के लिए हरिपदाकृति मध्य छिद्र ऊर्ध्वपुण्ड्र धारण करते हैं, वह इस परब्रह्म को प्रिय होते हैं और पुण्यवान् ऐश्वर्यवान् होते हैं।

पादाकृतिर्हरेः धार्यश्चोर्ध्वपुण्ड्रं विधानतः।
मध्ये छिद्रेण संयुक्तं तद्धि वै मन्दिरं हरेः ।।
ऊर्ध्वपुण्ड्रं मृदा कुर्यान्मध्ये शून्यं प्रकल्पयेत्।

विधान से हरिपदाकृति मध्य छिद्र युक्त ऊर्ध्वपुण्ड्र धारणीय है। हरि का मन्दिर वह ऊर्ध्वपुण्ड्र होता है, ऊर्ध्वपुण्ड्र मृत्तिका से

करना चाहिए और मध्य में बिन्दु रखना चाहिए। ज्योतिष में शून्य बिन्दु कहाता है। इत्यादि से आकार भेद सिद्ध है। (४७)

प्रश्न ४८ -- भारत मन्वादि ग्रन्थों में और आचारादर्शादि आह्निक ग्रन्थों में तिलक विधान नहीं है ?

उत्तर -- वेद पुराणादिकों में तिलक विधान कहा गया है। भारत मन्वादि ग्रन्थों में आचार कहा है, और आचारादि आह्निक ग्रन्थों में तिलक का निषेध भी नहीं किया है, अन्य आह्निक में तिलक का विधान किया है। (४८)

प्रश्न ४९ -- तिलक आवश्यकता में क्या प्रमाण है ?

उत्तर -- तिलक के बिना आवश्यक कर्म की असिद्धि होती है। तिलक धारण से फल अधिक होता है, पद्मपुराण में कहा है कि--

यज्ञो दानं तपो होमः स्वाध्यायः पितृतर्पणम्।
व्यर्थं भवति तत्सर्वमूर्ध्वपुण्ड्रं बिना कृतम्।।

यज्ञ, दान, तप, होम, वेदाध्ययन, पितृ तर्पण ये सब व्यर्थ होते हैं, ऊर्ध्वपुण्ड्र के बिना।

ऊर्ध्वपुण्ड्रविहीनस्तु किञ्चित् कर्म करोति यः।
इष्टापूर्तादिकं सर्वं निष्फलं स्यान्न संशयः।।
ऊर्ध्वपुण्ड्रविहीनस्तु सन्ध्या कर्मादिकं चरेत्।
तत्सर्वं राक्षसैर्नीतं नरकं चाधिगच्छति।।

ऊर्ध्वपुण्ड्र रहित पुरुष जो कुछ कर्म करता है, उसके मनोरथ सब निष्फल होते हैं। यह निश्चय है। ऊर्ध्वपुण्ड्र रहित पुरुष सन्ध्यावन्दनादि जो कर्म करता है, वह सब राजा बलि को

मिलता है, और उल्टा नरक में जाता है। वामन भगवान् ने बलि से कहा कि ऊर्ध्वपुण्ड्र रहित जो पुरुष कर्म करेंगे, उसके भागी आप हैं।

ऊर्ध्वपुण्ड्रधरो यस्तु कुर्याच्छ्राद्धं शुभानने।
कल्पकोटिसहस्राणि गयाश्राद्धफलं लभेत्।।
यज्ञदानतपश्चर्या जपहोमादिकं च यत्।
ऊर्ध्वपुण्ड्रधरः कुर्यात्तस्य पुण्यमनन्तकम्।।

श्रीशिवजी पार्वतीजी से कहते हैं हे शुभानने पार्वती, ऊर्ध्वपुण्ड्र धारण करने वाला हजार कोटि गया श्राद्ध करने से जो फल होता है, उस फल को लाभ करता है। यज्ञ, दान, तप, सेवा, जप, होमादिकों को ऊर्ध्वपुण्ड्र धारण करने वाला करता है, उसके असंख्य पुण्य होता है।

ऊर्ध्वपुण्ड्रधरो विप्रः सर्वलोकेषु पूजितः।
विमानवरमारुह्य याति विष्णोः परं पदम्।।
धारयेदूर्ध्वपुण्ड्रं तु त्रिसन्ध्यासु द्विजोत्तमः।
सर्वपापविशुद्ध्यर्थमिष्टापूर्त्तफलाप्तये।।
ऊर्ध्वपुण्ड्रधरं विप्रं दृष्ट्वा पापैः प्रमुच्यते।
नमस्कृत्वाऽथवा भक्त्या सर्वदानफलं लभेत्।।

ऊर्ध्वपुण्ड्र धारण करने वाला ब्राह्मण सब लोकों में पूजित है, उत्तम विमान पर चढ़कर विष्णु के परम पद को जाता है। द्विज त्रिकाल सन्ध्याओं में ऊर्ध्वपुण्ड्र धारण करें, सब पाप शुद्धि के लिए और इष्टापूर्त फल प्राप्ति के लिए ऊर्ध्वपुण्ड्रधारी विप्र के दर्शन कर सब पापों से छूटता है, भक्ति से नमस्कार करने से सब दान

के फल लाभ करता है। इसी से चन्दन न करने से ''दोष में क्या प्रमाण है''--इस प्रश्न का उत्तर हो चुका । (४६)

प्रश्न ५० -- तिलक न करने से दोष में क्या प्रमाण है ?

उत्तर -- ४६ वें प्रश्न में इसका उत्तर हो चुका । (५०)

प्रश्न ५१ -- सब शास्त्र सम्मत शिव-विष्णु के अभेद आपके सम्मत है कि नहीं ?

उत्तर --५१ प्रश्न का उत्तर ५२ प्रश्न में हो चुका। (५१)

प्रश्न ५२ -- अभेद है तो उसका उपदेश क्यों नहीं करते हैं ?

उत्तर -- परमार्थ में ब्रह्मात्मक होने से सब अवतारों के अभेद है। भेद, खण्ड-उपासनादि व्यवहार में सम्मत है। भेद न मानने से सब उपासना-शास्त्र-प्रक्रिया का नाश है। और वेद त्रिकाल कहना व्यर्थ है, एक ही काल कहना चाहिए और व्यवहार में अभेद अंगीकार से उपासना और उपासना से ध्यान तत्तत् गोलोक-कैलासादि लोकों की और उन लोकों में प्राप्ति रूपा सात्त्य-सालोक्य मुक्ति की कथा गई। भेद मिथ्या नहीं है, नित्य है। मिथ्या होने से वैकुण्ठ कैलास के नित्य भेद-प्रतिपादक वाक्य व्यर्थ हैं। और सब उपासना-काल व्यर्थ है।

शंका -- भेद मानने से अनेक ईश्वर कहना चाहिए ?

उत्तर -- सब अवतार अवतारी श्रीकृष्ण से कार्यार्थ भिन्न हैं, अन्यत्र अभिन्न हैं। इसलिए नाना होने पर भी एक है। मनुजी

ने भी कहा है कि--

एकत्वे सति नानात्वं नानात्वे सति चैकधा।

अचिन्त्यं ब्रह्मणो रूपं कस्तद्वेदितुमर्हति।।

एक होने पर अनेक, अनेक होने पर एक ब्रह्म स्वरूप है, इसलिए ब्रह्म स्वरूप अचिन्त्य है, कौन उसको परिमित कर सकता है।

श्रुति -- स एकधा भवति, द्विधा भवति, त्रिधा भवति, शतधा भवति, सहस्रधा भवति।

वह एक, दो, तीन, सौ, हजार प्रकार का होता है।

शंका -- कहीं शिव सेव्य है, विष्णु परिवार, कहीं विष्णु सेव्य, शिव परिवार है, कहीं शिव में न्यूनता, कहीं विष्णु में है। परस्पर शिव-विष्णु के अभेद और प्रीति सब शास्त्र सम्मत है। अभेद उपदेश क्यों नहीं करते हैं ? जो गृहस्थ वैष्णव है, उनके भी पार्थिव पूजन में अधिकार है। केवल विष्णु लोक की इच्छा करने वाले, विष्णु मन्त्र ग्रहण करें, यह आग्रह है। उनको भी शिव दर्शन नमस्कारादि के निषेध नहीं है। कहा भी है--

परात्परतरं यान्ति नारायणपरायणाः।

न ते तत्र गमिष्यन्ति विद्विषन्ति महेश्वरम्।।

परम पद को नारायण परायण जीव जाते हैं, शिव से जो द्वेष करते हैं वे परम पद नहीं जाते हैं। भेद है तो शास्त्रोक्त-दोष भागी आप लोग हैं। इत्यादि प्रश्नों के भी उत्तर हो चुका। (५१-५२)

प्रश्न ५३ -- भेद है तो शास्त्रोक्त दोषभागी आप लोग

हैं ?

उत्तर -- ५३ वें प्रश्न का उत्तर ५२ वें प्रश्न के उत्तर में हो चुका। ५४ वें का प्रश्न का उत्तर नीचे दिया है।

प्रश्न ५४ -- और पूर्वाचार्य भागवतादि टीका करने वालों ने जैसे विरोध का परिहार किया है, वह प्रमाण है कि अप्रमाण है?

उत्तर -- ५३ वें प्रश्न का उत्तर ५२ वें प्रश्न के उत्तर में हो चुका। ५४ वें प्रश्न का उत्तर यह है, विद्वानों ने यदि सब शास्त्रों से अविरुद्ध कहा है, तो सम्मत नहीं है। इसी से प्रमाण यदि है तो कहें, वे यदि विज्ञ हैं तो उल्लेख प्रमा रूपक है, तो, अज्ञ यदि हैं तो सदा जगत् विरुद्धवादी पहले कौन है, इत्यादि प्रश्नों के उत्तर हो चुके। (५४)

प्रश्न ५५ -- प्रमाण यदि है तो आप लोगों से रचित ग्रन्थों में कैसे विरुद्ध वर्णन है ?

उत्तर -- हम लोगों के ग्रन्थों में विरुद्ध वर्णन नहीं है, उपासना नित्य है, भारत भागवतादि के टीकाकार श्रीनीलकण्ठ श्रीधरादि के और श्रीशंकराचार्य के भाष्यादि में सब विरोध परिहार करने से वासुदेव नारायणादि शब्दों के अर्थ परब्रह्म की सब विभूति कहा है, और जगज्जन्मादि कारण मायानियन्ता, सर्वात्म, सर्व प्रेरक कहा है। यही सब मेरे आचार्यों ने कहा था।

शान्तिकान्तिगुणमन्दिरं हरिं स्थेमसृष्टिलयमोक्षकारणम्।
व्यापिनं परमसत्यमंशिनं नौमि नन्दगृहचन्दिनं प्रभुम्।।

कान्ति, शान्ति, गुणों के मन्दिर, स्थिति, सृष्टि, प्रलय

तथा मोक्षकारण, व्यापक परम सत्य अंशी नन्द गृह में चन्द रूप श्रीहरि को मैं नमस्कार करता हूँ। श्रीनिम्बार्क भगवान् ने कहा था। श्रीनीलकण्ठजी ने भारत के प्रथम मंगल श्लोक में कहा है कि, शास्त्र के आरम्भ में बहु विघ्न सम्भावना से उपास्य वासुदेव को द्वादशाक्षर से प्रणाम करते हैं। (५५)

प्रश्न ५६ -- अप्रमाण यदि है तो वे विज्ञ हैं कि अज्ञ हैं सो कहें ?

उत्तर -- इस प्रश्न का भी उत्तर हो चुका । (५६)

प्रश्न ५७ -- वे यदि विज्ञ हैं तो उल्लेख प्रमा रूप करें?

उत्तर -- इन प्रश्नों के उत्तर हो चुके । (५७)

प्रश्न ५८ -- अज्ञ हैं तो सदा जगत् विरुद्धवादी आप लोग हैं कि और हैं ?

उत्तर -- इसका उत्तर हो चुका है और हम लोग जगत् विरुद्धवादी नहीं हैं, किन्तु भगवत् उपासनार्थ जगत् सत्यवादी हैं। जगत् को पवित्र करने वाले परम भागवतों के दास हम लोग हैं। (५८)

प्रश्न ५९ -- यस्त्वां द्वेष्टि स मां द्वेष्टि यस्त्वामनु स मामनु, तदुपास्या जगन्नाथ सैवास्तु ममापि च। इन वाक्यों के अर्थ किस रीति से होता है ?

उत्तर -- इसका उत्तर भेद प्रतिपादन प्रकरणान्तर से हो चुका है। (५९)

प्रश्न ६० -- आप लोगों का आह्निक कैसा है ? प्रातः कृत्यादि सन्ध्यावन्दनादि कर्म किस रीति से करते हैं,

श्रुति से वा स्मृति से?

उत्तर -- वैदिक सन्ध्या अपनी-अपनी शास्त्रोक्त रीति से करते हैं। तन्त्र सन्ध्या क्रमदीपिकादि ग्रन्थानुसार से करते हैं। और आह्निक कृत्य, ब्रह्म मुहूर्त में उठकर गुरुवों को स्मरण कर बाद में हरि स्मरण कर, बाद में बाहर जाकर शौच-दन्त धावनादि एवं स्नानादि कर, बाद में देवगृह में जाकर, भूम्यादि शोधन कर, आसन बिछाकर, उसके ऊपर बैठकर, केशवादि १२ नामों से गोपीचन्दन से तिलकों को कर, बाद में अपनी शास्त्रोक्त वैदिक सन्ध्या और गायत्री जप कर, बाद में तान्त्रिक सन्ध्या करते हैं। अपने ग्रन्थों में उक्त शुद्धि, मातृकादि न्यासों को कर, गुरूपदिष्ट मन्त्र के जप कर, अपने शालिग्रामादि मूर्ति में हरि पूजा करते हैं। पूजा के प्रकार कलश, समुद्र शंख, पाद्य, अर्घ, आचमन, मधुपर्क, प्रोक्षणी पात्र, हाथ प्रक्षालन पात्रों को स्थापन कर, बाद में विष्णु पूजा विहित पुष्प, तुलसी, चन्दनादि उपहार ग्रहण कर भगवान् को स्नान कराकर चन्दन तुलसी, वस्त्रादि समर्पण कर, धूप-दीप, पुष्पाञ्जलि कर अपराधों की क्षमा मांग कर, भगवत् पादोदक सेवन कर, बाद में मन्त्र, जप, स्तोत्रादि पाठ करते हैं । तत्पश्चात् मध्याह्न सन्ध्या, गुरुवों का तर्पण कर, भगवत् पूजन कर, वैष्णव और अभ्यागतों के प्रति भगवत् प्रसाद देकर और अपने सेवन कर, बाद गीता उपनिषदादि अनुकूल सम्प्रदायी ग्रन्थ विचार से ब्रह्म विचार करते हैं। फिर सायंकाल में सायं सन्ध्या आरती कर, हरि पूजा कर, रात्रि में हरि स्मरण पूर्वक शयन करते हैं, शयन में निद्राभङ्ग होने पर हरि का स्मरण करते हैं विष्णु धर्मोत्तर में कहा

है कि--

एककालं द्विकालं वा त्रिकालं पूजयेद्धरिम्।

अपूज्य भोजनं कुर्वन्नरके च व्रजेन्नरः ।।

स्मर्तव्यः सततं विष्णुर्विस्मर्तव्यो न कर्हिचित्।

सर्वे विधिनिषेधास्स्युरेतयोरेव किंकराः ।।

एक काल, दो काल वा त्रिकाल हरि की पूजा करें, बिना पूजा किये भोजन कर्त्ता नरक में जाता है। निरन्तर विष्णु स्मरणीय हैं, विस्मरणीय कभी नहीं हैं। सब विधि निषेध इन्हीं के किंकर हैं। (६०)

प्रश्न ६१ -- विधान और ग्रन्थ कैसा है ?

उत्तर -- वेद तन्त्र पुराण इतिहासादिकों से मेरे सम्प्रदाय के अनुकूल भागवत धर्म प्रतिपादक समुदाय रूप वचन अनेक हैं।(६१)

प्रश्न ६२ -- भगवत् पूजन समय में कौन-कौन पात्र उत्तम हैं, और कौन-कौन निषिद्ध हैं ?

उत्तर -- स्नान, अर्घ पात्र, आचमन, मधुपर्क, प्रोक्षणी, समुद्र शंख, कलश, हस्त प्रक्षालन इत्यादि पात्र सुवर्ण, रजत, ताम्र के उत्तम हैं, लोहा आदि के निषिद्ध हैं। (६२)

प्रश्न ६३ -- गंगाजल में आप लोगों के स्नान समीचीन है कि नहीं ?

उत्तर -- समीचीन है--

गंगे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति।

नर्मदे सिन्धु कावेरि जलेऽस्मिन्सन्निधिं कुरु ।।

इस वचन से शंख में गंगादि तीर्थ आह्वान कर स्नान विधान है। (६३)

प्रश्न ६४ -- आपके सम्प्रदाय रहित विद्वान् ब्राह्मण से देखा हुआ पाक आप लोग भोजन करते हैं कि नहीं ? और आपके सम्प्रदाय के वर्णादि से देखा हुआ अन्न भोजन करते हैं कि नहीं ?

उत्तर -- यदि भगवत् प्रसाद हो तो करते हैं।

यन्नास्ति वेदे न च यत्पुराणे रामायणे भारतसागरे वा।
मन्वादि शास्त्रेषु च यन्नचोक्तं तन्नास्ति नास्तीति न तेन कार्यम्।।
यो ग्राह्यमार्गः खलु भारतादौ वेदे पुराणेऽपि च यन्न तन्न ।
तत्तद्विरोधे च यदस्ति किंचित् निर्मूलमेतन्नहि तेन कार्यम्।।

वेद पुराण, रामायण, समुद्र भारत और मन्वादि शास्त्र इनमें जो नहीं कहा है, वह नहीं है, इसलिये करणीय नहीं है। जो ग्रह्य मार्ग भारतादि में, वेद में, पुराण में, तत्-तत वस्तु विरोध से निर्मूल है, इसलिये करने योग्य नहीं हैं। (६४)

।। इति श्रीमन्महाराधिराज नरेन्द्रकृत चतुःषष्टि प्रश्नोत्तरम् ।।

श्रीवल्लभीय में प्रश्न

१. श्रीवल्लभजी, शैव, सौर्य, गाणपत्य, शाक्त वैष्णवों में कौन हैं, यदि वैष्णव है तो किस सम्प्रदाय में है और कौन प्रमाण है?

२. परम्परा किस सम्प्रदाय से मिलती है, और कैसे है ?

३. निम्बार्क, माध्व, विष्णु स्वामी, श्रीसम्प्रदाय के व्यवहार आचरण में शामिल है कि नहीं है, तो किसके साथ है ? जिसके साथ है, उससे विलक्षण आचरण है कि नहीं है, तो शास्त्र सम्मत है कि नहीं?

४.जिस मन्त्र के उपदेश करते हैं, वह उन सम्प्रदायों में चलित है कि नहीं ?

५. जिस मन्त्र के उपदेश करते हैं, वह वेद से सम्बन्ध रखता है कि नहीं रखता है, रखता है तो किस वेद से और किस ग्रन्थ से?

६. और अवैदिक उपदेश किस के लिये है, किस प्रमाण से है?

७. शिष्य गले में कुश के कण्ठी धारण करें, वैष्णव सम्प्रदाय में किसके यहाँ नियम है, किस प्रमाण से है ?

८. गले में कुशा धारण करने से वैष्णव हो सकते हैं कि नहीं, होता है तो किस प्रमाण से ?

९. तुलसी कमलाक्ष से अन्य धारणार्थ वैष्णव के लिये है कि नहीं ?

१०. क्षणमात्र तुलसी न धारण करने से विष्णु के द्रोही वैष्णव होता है कि नहीं ?

११. वैष्णव शिष्य कुशा धारण कर अधोगति को जाते हैं कि नहीं ?

१२. वैष्णव सम्प्रदाय में सफेद ऊर्ध्वपुण्ड्र तिलक धारण से अन्य भी विधान है कि नहीं, है तो किस प्रमाण से है ?

१३. ऊर्ध्वपुण्ड्र तिलक किस द्रव्य से करना चाहिये उसमें प्रमाण कौन हैं ?

१४. वल्लभकुल शब्द के क्या अर्थ हैं, यहाँ कुल शब्द सम्प्रदाय बोधक है कि अन्य बोधक, सम्प्रदाय बोधक है तो वैष्णवों में ४ (चार) सम्प्रदाय लोक शास्त्र में प्रसिद्ध है, पांचवा किस प्रमाण से है ?

१५. सम्प्रदाय में अन्नादि परम्परा से जिसे मन्त्र के उपदेश होता है, उसके उपदेश से शिष्य के कल्याण होता है कि अन्य से भी होता है ?

१६. और श्रीवल्लभजी ने ब्रह्मसूत्र के ऊपर टीका की थी सो किसके मत से किस ग्रन्थ के आशय ले कर की थी ?

१७. श्रीनिम्बार्क सम्प्रदाय के ब्रह्मसूत्र भाष्य में और श्रुत्यन्त सुरद्रुम में परपक्ष गिरिवज्रादि में श्रीमाधव, श्रीसम्प्रदाय के और श्रीशंकर सम्प्रदाय के चर्चा हैं, श्रीसम्प्रदाय के श्रीभाष्य में शतदूषण आदि में अन्य नवीन मत के चर्चा है। श्रीमाधव सम्प्रदाय के ब्रह्मसूत्र भाष्य टीका में और श्रीव्यासतीर्थ कृत ग्रन्थों में इन तीन मतों के चर्चा है। श्रीशंकर सम्प्रदाय के ब्रह्मसूत्र भाष्य में और अद्वैतसिद्धि, चित्सुखी, खण्डनखण्डखाद्य आदि ग्रन्थों में अन्य ३ (तीन) मतों के चर्चा है। श्रीवल्लभजी के मत के कोई कहीं नहीं चर्चा किया है, सो क्यों नहीं किया?

१८. और श्रीवल्लभजी वेद में अधिक प्रमाण मानते हैं कि स्मृति पुराणादि में ?

१९. वेद सिद्ध वस्तु में स्मृति प्रमाण देते हैं कि, वेद निरपेक्षित में?

२०. वेद बाह्य स्मृत्यादिक निष्फल है कि नही ?

२१. और श्रीवल्लभजी शुद्धाद्वैत ब्रह्म कहते हैं, सो शुद्धाद्वैत शब्द वेद स्मृति पुराणादिकों में और ब्रह्मसूत्र में कहीं प्रसिद्ध है कि नहीं,

है तो किस जगह किस प्रकरण में कौन वाक्य है ?

२२. प्रिया-प्रियतम की उपासना में प्रधानता वेद सम्मति से किस में है ?

२३. प्रिया की आधीनता श्रीकृष्ण में है कि नहीं हैं, तो वेद में किस जगह प्रसिद्ध है ?

२४. कार्य कारण के केवल अभेद मानने से साङ्कर्य दोष कैसे वारण होता है ?

२५. और आपके मत में अभेद श्रीनिम्बार्क, श्रीसम्प्रदाय और कपिल पतञ्जलि मीमांसक से विलक्षण है कि नहीं, विलक्षण है तो किस अंश में है ?

२६. श्रीशंकर मत के अभेद आपके अभेद से मेल रखता है कि नहीं ?

२७. और भेद बोधक श्रुतियों से आपकी क्या अनिष्टता है?

२८. अर्चिरादि मार्ग आपको मन्तव्य है कि नहीं ?

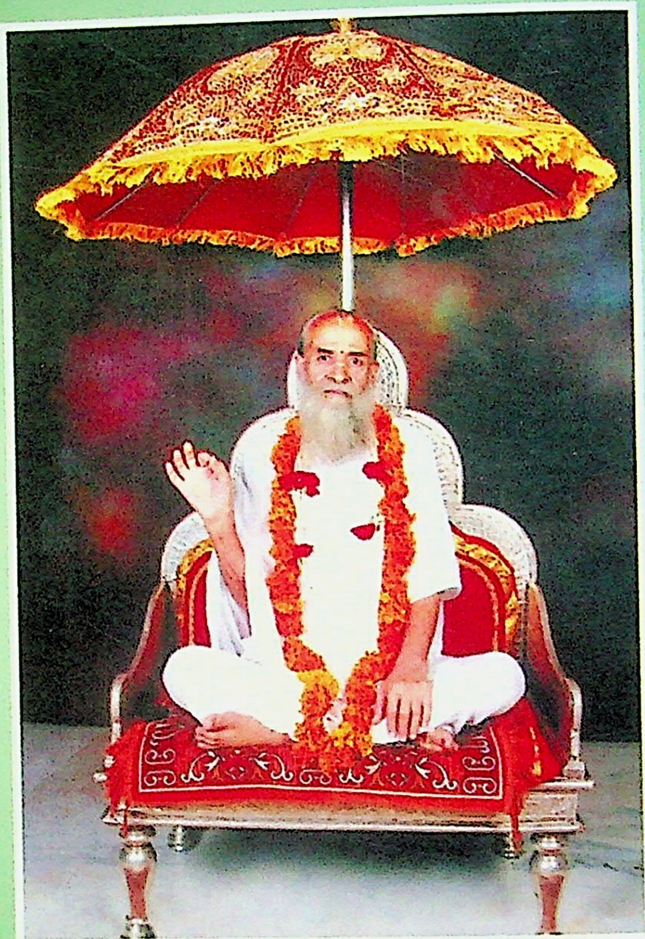
२९. और साधर्म प्राप्ति मोक्ष है कि नहीं, नहीं होय तो (परमं साम्यमुपैति) मम साधर्ममागता, इत्यादि श्रुति और गीता की क्या गति है ?

३०. मोक्षकाल में छान्दोग्योपनिषद् में प्रजापति इन्द्र संवाद में जो दशा कही गई सो ही होती है कि विलक्षण होती है?

३१. मोक्षकाल में जीव के ब्रह्म के साथ रमण होता है कि नहीं?

३२. होता है तो जीव ब्रह्म के केवल अभेद कैसे बनता है?

(इत्यादि आपके मन्तव्य जानने के लिये किया गया है द्वेष से नहीं)



श्रीमन्निखिलमहीमण्डलाचार्य, चक्र-चूड़ामणि, सर्वतन्त्र - स्वतन्त्र, द्वैताद्वैतप्रवर्तक, यतिपतिदिनेश, राजराजेन्द्रसमभ्यर्चितचरणकमल, भगवन्निम्बार्काचार्यपीठविराजित, अनन्तानन्त श्रीविभूषित

जगद्‌गुरु श्रीनिम्बार्काचार्यपीठाधीश्वर

श्रीराधासर्वेश्वरशरणदेवाचार्य

श्री ''श्रीजी'' महाराज

अखिल भारतीय श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ, निम्बार्क तीर्थ -सलेमाबाद